श्री अमर भारती

वीरायतन की मासिक पत्रिका | जनवरी-2023 | वर्ष-66 | अंक-01 | मूल्य: रू॰ 10/-

VEERAYATAN
compassion in action

परम पूज्य आचार्यश्री चन्दनाश्रीजी 'श्री ताई माँ' के

87 वें जन्मोत्सव

के उपलक्ष में

नि:शुल्क मेगा नेत्र एवं दन्त शिविर

दिनांक - 22 जनवरी से 26 जनवरी 2023

जनसेवा हेतु पद्मश्री से सम्मानित परम पूज्य आचार्यश्री डॉ. चन्दनाश्रीजी 'श्री ताई माँ'

नेत्र ज्योति सेवा मन्दिरम् - वीरायतन

राजगीर- बिहार

26 JANUARY REPUBLIC DAY OF INDIA

24 जनवरी 2023	25 जनवरी 2023	26 जनवरी 2023
93 मरीजों का सफल मोतियाबिंद ऑपरेशन	75 मरीजों का सफल मोतियाबिंद ऑपरेशन	131 मरीजों का सफल मोतियाबिंद ऑपरेशन

श्री अमर भारती

वीरायतन की मासिक पत्रिका जनवरी-2023 वर्ष: 66 अंक: 01

संस्थापक
उपाध्यायश्री अमरमुनि

दिशा-निर्देश
आचार्यश्री चन्दनाश्रीजी

•

सम्पादक
साध्वीश्री साधनाजी

•

महामंत्री
तनसुखराज डागा

उद्बोधन

स्वागत शत-शत स्वागत नूतन,
वर्ष! सृष्टि को सरसाना।
अन्दर बाहर जन-जीवन में,
नव आशांकुर प्रगटाना।।

आया है नववर्ष शुभंकर,
करो प्रेम-पुलकित स्वागत।
बहो आज से सद्भावों की,
पावन धारा में निरन्तर।।

उठो नई अंगड़ाई लेकर,
दृढ़ कदमों से चलो बढ़ो।
कर्मयोग ही सिद्ध योग है,
अविचल मंगल मन्त्र पढो।।

–उपाध्याय अमरमुनि

This issue of Shri Amar Bharti can be downloaded from our website- www.veerayatan.org

अनुक्रमणिका

उद्बोधन	उपाध्याय अमरमुनि	01
शुभ संक्रान्ति	उपाध्याय अमरमुनि	02
सेवा : साधना का सर्वोच्च शिखर	आचार्य चन्दना	08
Tai Ma Rebel with a Cause (हिन्दी रुपान्तरण)	Anne Valley	13
विवेक उठा आवरण हटा	उपाध्याय अमरमुनि	19
चदरिया झीनी रे झीनी	गीता पारेख	23
जल ही जीवन है	संगृहीत	25
सव्वे कम्मा खयं जंति मोहनिज्जे खयं गये	उपाध्याय अमरमुनि	27
अविस्मरणीय दिन	.....	29
सम्मानीय है मातृजाति	आचार्य चन्दना	30
मित्र मानव! आओ थोड़ी-सी बात कर ले	आचार्य चन्दना	33
बीज बोते चलो	आचार्य चन्दना	34
जिंदगी शानदार है, जी भरकर जिएं	जयदीप ढढ्ढा	35
ज्ञान है सच्ची विरासत		37
विशाल ज्ञानकोष		38
अद्भुत छे सेवाभाव	निरागचंद्र सागर	40

पर्व–

आध्यात्मिक पर्वों का यह देश भारतवर्ष इतना अद्भुत, विलक्षण और विराट देश है कि यहाँ मरण भी एक पर्व है। पर्व व उत्सवों के जितने विविध रूप भारतवर्ष के इतिहास में दृष्टिगत होते हैं, कही अन्यत्र नहीं होते।

भारतीय चेतना आनन्द की चेतना है। वह सदैव अमृत की उपासक रही है पर्व चाहे आध्यात्मिक हो या सामाजिक, वह जन-जीवन के आनन्द का एक अमरस्रोत ही है। वह आनन्द का स्रोत जो सत्य से प्रादुर्भूत हुआ हो। पर्व प्रेरणा है अतीत की और अतीत है आधार प्रगति का। पर्वों के रूप में जन जीवन आज भी अतीत से जुड़ा है। इन पर्वों के आलोक में जन जीवन की मूल चेतना जागृत होकर प्रगति पथ पर एवं कर्म–पथ पर अग्रसर रहने की प्रेरणा पा सकी है।

महापुरूषों का कहना है कि तुम्हारा जन्म केवल इसलिए नहीं हुआ है कि तुम अंधकार में पड़े रहो और ठोकरें खाते रहो । सृष्टि के तमाम प्राणियों में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है। उसमें बुद्धि है, शक्ति है और इन सबसे ऊपर उसे जीवन जीने की कला का बोध है। उसने अपने साहस और क्षमता युक्त कर्म से ही प्रगति के इतने सोपान तय किये हैं।

जब हम अतीत में झांककर पर्वों के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो हममें एक नवीन उत्साह, एक नवीन प्रेरणा का संचार होता है। ये पर्व हमारे समक्ष जीवन के विविध रूप प्रस्तुत करते हैं, जीवन की दिव्यता एवं विलक्षणता प्रस्तुत करते हैं।

पर्व जागृति के प्रतीक

पर्व चाहे आध्यात्मिक हो या सामाजिक, हम इन्हें उत्सव के रूप में मनाते हैं। तप के रूप में ये हमारी चेतना को जगृत करते हैं। ये हमें क्षुद्र से विराट की ओर गति करने की प्रेरणा देते हैं। हमारी मूर्च्छा हमें 'स्व' एवं 'पर' के प्रति जो कर्तव्याकर्तव्य का बोध है उसे ढंक देती है, नष्ट कर देती है और मनुष्य दायित्वविहीन जीवन जीता है। केवल अपने सुख, अपने स्वार्थ के अंधकूप में पड़ा रहता है। तब पर्वों के माध्यम से महापुरूषों का दिव्य संदेश जो परस्पर सहयोग का संदेश है, हमारे स्मृतिपथ पर उतरता है। अन्यथा मोहग्रस्त होने के कारण उस मूर्च्छित अवस्था में न तो हमें अपने कर्त्तव्य का सही बोध हो पाता है और न ही जीवन-पथ का सम्यक् बोध हो पाता है और न सम्यक् ज्ञान। इस मूर्च्छा के कारण ही मनुष्य भूल जाता है कि उसका जन्म भी किसी के सहयोग से हुआ है और उसका जीवन भी कितने-कितने व्यक्ति और उपादानों के आधार पर टिका हुआ है। उसका जीवन एकाकी नहीं है। अतः उसके जीवन का प्रत्येक पल 'स्व' के साथ 'पर' अर्थात् अपने हित के साथ पर हित के लिए है।

पर्वों का महत्त्व

अध्यात्म-जगत् से जुड़ा पर्व पर्युषण चैतन्य की तलाश का पर्व है तथा दीपावली अन्धकार से प्रकाश की ओर गमन का पर्व है। और होली का पर्व रंगहीन निराश जीवन को रंगों से भर देता है। सौहार्द और सद्भाव के प्रतीक पर्वों की श्रृंखला में आज का यह मकर संक्रान्ति का पर्व प्रकृति और समाज दोनों से सम्बद्ध है।

आज के दिन सूर्य धनुराशि से मकर राशि पर संक्रमण करता है। क्रान्ति का अर्थ होता है गमन करना या आगे बढ़ना। और संक्रान्ति का अर्थ होता है- सम्यक् रूप से आगे बढ़ना। आज सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण पर आता है। उत्तर दिशा देवताओं की दिशा है। हिमालय और कैलाश जैसे पर्वत उत्तर दिशा के पर्वत है।

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा,
हिमालयो नाम नगाधिराजः।

शास्त्रकारों ने दिशाओं को महत्त्व दिया है। पूर्व दिशा प्रकाश की दिशा के रूप में और उत्तर दिशा दिव्यात्माओं के निवास स्थान के रूप में है। महत्त्व तो प्रकाश का है, महत्त्व दिव्यात्माओं का है। महापुरूष स्वयं प्रकाश है,

स्वयंभू देव हैं। वास्तव में ज्ञान ही प्रकाश है, और ज्ञानी ही हमारे लिए उत्तरायण है।

गतिशील रहो

आज सूर्य उत्तरायण में आता है। दक्षिण पथ से उत्तर पथ की ओर गति करता हुआ सूर्य हमें प्रेरणा देता है कि जीवन को हमेशा गतिशील रखो। गतिशील जल निर्मल होता है, गतिशील पवन सुखद होती है और गतिशील जीवन आनन्दपूर्ण होता है।

आज धर्मपरंपराएं गतिहीन हो गयी हैं। तप के नाम पर, जप के नाम पर, ध्यान के नाम पर जड़ता को अंगीकार कर लिया है। संक्रान्ति होनी चाहिए। संक्रान्ति का अर्थ है एक शिखर से दूसरे शिखर की यात्रा। संक्रान्ति सूर्य की यात्रा का नाम है। यदि सूर्य एक ही स्थान पर स्थित रहता तो ऋतुपरिवर्तन न होता और इस भूमण्डल पर, न वर्षा होती, न सर्दी का मौसम आता न गर्मी का मौसम आता। तो क्या जीवन होता इस धरती पर?

संक्रान्ति का संदेश है कि जिस प्रकार सूर्य अपनी गति नहीं भूलता, वह निरन्तर गति करता रहता है, ठीक उसी प्रकार साधक को भी निरन्तर गतिमान रहना चाहिए। भूमण्डल पर जीवन के जितने भी साधन हैं वे सारे सूर्य की गति के कारण हैं। सूर्य से उष्मा पाकर ही पृथ्वी पर जीवन के साधन विकसित होते हैं । चाहे वे साधन वनस्पति के रूप में हों, चाहे जल के रूप में या वन्य सम्पदा के रूप में। कुछ जैन भूगोलवेत्तओं ने माना है कि कुछ द्वीपों में सूर्य स्थिर है। वहाँ राशियों का संक्रमण नहीं होता। निश्चित ही ऐसे द्वीपों में जीवन का भी अभाव माना है। वस्तुतः गति ही जीवन है। गति ही सृष्टि के विकास का कारण है, और गति ही प्रगति का मूलमंत्र है।

मनुष्य की गतिशीलता, सृजनशीलता ने परिवार, समाज एवं राष्ट्र का विकास किया है और इन सबसे ऊपर धर्म का विकास भी इसी सृजनशीलता के द्वारा हुआ है। इसीलिए ढाई द्वीप जो मनुष्य का क्षेत्र है वही पर मोक्ष है, उसके आगे कोई मोक्ष की भूमिका नहीं है। ढाई द्वीप के बाहर शून्य है। वहाँ काल के परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं है। काल का लक्षण बताते है आचार्य-

'वर्तना लक्षणो कालः'
"कालो वट्टण लक्खणो"

अर्थात् काल ही परिवर्तन की क्रिया है। काल न हो तो किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं है। लेकिन इस काल-परिवर्तन के पीछे ऋतु परिवर्तन की भूमिका ही महत्त्वपूर्ण होती है।

सूर्य आदिकर्त्ता

संसार परिवर्तनशील है। इसलिए कि प्रकृति के सारे उपादान-स्कन्ध परिवर्तनशील है, गतिशील है। नियमित रूप से ये परिवर्तन होते हैं इन सब परिवर्तनों का एकमात्र आधार है सूर्य इसीलिए उसे आदित्य कहा है। वह

आदिकर्ता है। सृष्टि का प्रारम्भ ही सूर्य से है। वैदिक परंपरा के अनुसार प्रजापति की दो पुत्रिया थी- दीति और अदिति। दीति से दैत्यों का जन्म हुआ और अदिति से देवताओं का इन्हीं देवताओं में एक सूर्य है। दीति का अर्थ है खण्डन करना या नाश करना। अदिति का अर्थ है निर्माण करना। अदिति का बडा पुत्र सूर्य है जो निर्माता है। वह आदिकर्ता है इसलिए आदित्य है। वह काल का अधिष्ठाता है, उस काल का जो परिवर्तन का हेतु है। वस्तुतः विराट पुरूषों के संकल्प विराट होते हैं। समाज की जड़ता नष्ट करने हेतु उन्होंने बड़े सुन्दर प्रतीक दिये हैं। सूर्य के संक्रमण जैसा दिव्य प्रतीक उनकी विराट मेधा क्षमता का द्योतक है।

तिल प्रकाश का प्रतीक

मकर संक्रान्ति को दो प्रकार से मनाया जाता है। कुछ इसे निराहार रहकर मनाते हैं तो कुछ तिल और गुड़ का भोजन करते हैं। तिल प्रकाश का प्रतीक है और गुड़ मीठेपन का प्रतीक है। अनादि काल से मनुष्य को प्रकाश की अपेक्षा रही है। इसलिए वह प्रकाश की खोज में रहा। और सर्वप्रथम भगवन ऋषभदेव के काल में तिल को पीसा गया एवं उसमें से तेल निकाला गया। फिर उस तेल में बाती भिंगोकर प्रकाश किया गया।

स्नेहपूर्ण हो अग्नि

स्नेह न हो तो अग्नि दाहक होती है। बाती को यदि तेल में भिंगोये बिना प्रज्वलित किया जाय तो वह पलभर में जलकर राख बन जाती है और तेल में भिंगोकर जलाया जाय तो वह घण्टों जलती रहती है। प्रकाश बिखेरती रहती है। अग्नि अर्थात् उष्मा ही जीवन है। यह शरीर उष्मा के आधार पर टिका है। उष्मा के हटते ही शरीर शव बन जाता है। उष्मा को ही तेजस्विता कहा गया है। शरीर की उष्मा के साथ मन की भी उष्मा अपेक्षित है, उसके अभाव में मनुष्य कुछ नहीं कर पाता।

सच्चे साधक को साधना के मार्गपर अग्रसर होने के लिए किसी मुहूर्त को देखने की आवश्यकता नहीं होती, बस उष्मा की अर्थात् उत्साह की आवश्यकता होती है। महर्षि गर्ग ने कहा था- यात्रा के लिए तुम्हारे मन का उत्साह ही सबसे बड़ा मुहूर्त है। मुहूर्त के चक्कर में पड़ा रहेगा तो उसका उत्साह ठण्डा हो जायेगा। अगर शुभकार्य में उत्साह ही नहीं है तो कितना ही शुभ मुहूर्त हो कोई अर्थ नहीं होता उसका। वस्तुतः उत्साह ही कर्म में प्राण पैदा करता है, गति पैदा करता है और उस कर्म को सत्य के शिखरों तक पहुँचाता है। अतः शरीर की उष्मा के साथ मन की उष्मा भी आवश्यक है। अन्यथा निस्तेज व्यक्ति तो राख के ढेर के समान है। तेजोहीन व्यक्ति बहाना बनाता है। कभी सर्दी का, तो कभी गर्मी का, कभी यह तो कभी वह। स्नेह विहीन जीवन से न तो परिवार का कल्याण हो सकता है न समाज का। और न हीं मधुरता विहीन जीवन

अपने रिश्ते-नाते को निभा सकता है कड़ुवाहट परिवार को तोड़ती है, समाज में बिखराव पैदा करती है।

इन छोटे-छोटे पर्व-प्रतीकों में जीवन का रहस्य छुपा हुआ है। जब तक स्नेह और मिठास नहीं है तबतक न गृहस्थ का गार्हस्थ्य है; न साधक की साधना है।

एक बार एक कौआ बड़ा उदास-सा उड़ा जा रहा था। मार्ग में उसे कोयल मिल गई। कोयल ने पूछा, "कौआ काका! कहा जा रहे हो? सब ठीक तो है?" मत पूछो कोयल! मेरे हाल। अरे! इतने बदतर हाल है कि मैं देश छोड़कर जा रहा हूँ। यहाँ मेरा अपमान ही अपमान होता है हर जगह। जहाँ बैठता हूँ वहाँ से उड़ा देते हैं लोग मुझे। बड़ा खराब है यह देश।"

कोयल ने कहा, **"चाचा अपनी बोली सुधार लो तो जहाँ भी जाओगे सम्मान पाओगे"** बोली में अगर मिठास नहीं है तो सम्मान कहाँ से पाओगे?

जिनत्व ही जैनत्व

इस पुण्यभुमि में एक और संक्रान्ति हुई थी जिसकी किरणें आज भी इस पावन तीर्थभूमि की रज-रज मे रमी हुई है, इस वैभारगिरि के कण-कण को स्पर्श करती हुई अन्धेरे में प्रकाश फैला रही है। ढाई हजार वर्ष पूर्व भगवान महावीर के द्वारा जो धार्मिक क्रान्ति हुई थी उससे जन-जीवन में एक महान परिवर्तन आया था। उन्होंने केवल बाह्य जगत से ही नहीं, अन्तरंग-जीवन से भी गतिशील बनने की प्रेरणा दी थी। उनका संदेश चैतन्य को दिव्य बनाने के लिए था। उनके धर्मचक्र का प्रवर्तन इसलिए हुआ था कि हम परस्पर स्नेह सौहार्द एवं सद्भाव से रह सकें हमारी जड़ता दूर हो सके।

आचार्य हेमचन्द्र ने काव्यानुशासन में कहा है-

"क्षेमः सर्व प्रजानां प्रभवतु
बलवान् धार्मिको भूमिपालः।
काले-काले च सम्यक् विलसतु
मघवा व्याधयो यान्तु नाशम्।
दुर्भिक्षं चौर्यमारी क्षणमपि
जगतां मास्मभूत् जीवलोके।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रसरतु
सततं सर्वसौख्य प्रदायि॥"

अर्थात् इस भूमण्डल पर रहनेवाले समस्त प्राणियों का कल्याण हो। राजा हो या भूमिपाल सभी शक्तिशाली बनें। समय पर वर्षा होती रहे। जब वर्षा होगी तभी क्यारियाँ लहलहायेंगी। क्यारियों में जीवन लहलहायेगा अन्यथा दुर्भिक्ष होते हैं, चौर्य कर्म होते हैं, जीवन सामग्री का अभाव हो जाता है। भगवान महावीर के इस धर्मचक्र मे सभी सुखी होवें।

सर्वकल्याण की भावना मैत्रीभाव है, जो जिनत्व को प्रकट करता है, क्षुद्रता से ऊपर उठाकर विराट बनाता है। विश्वमैत्री की मिठास और विश्वमैत्री के पथ पर चलने का तेज ही जिनत्व है, जैनत्व है।

सम्यक्त्व का बीज–

अनुकम्पा वह पावन गंगा है जो कठोर चट्टानों को तोड़कर बह जाती है और सबको जीवन, त्राण देती हुई सूखे मृतप्राय निराश जीवन में प्राण फूंकती है। अनुकम्पामय भावों की तरलता में ही सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। साधना का सूत्रपात यही से होता है।

जीवन का यही वह उत्स है जिसने व्यक्ति को जीवन से जोड़ा है एवं जिसने परिवार की रचना की है। परिवारों से समाज बना है, समाज से राष्ट्र और राष्ट्र से विश्व। सबकों परस्पर गूँथ दिया गया है। व्यक्ति की समष्टि से एकात्मभूत प्रतीति ही अनुकम्पा है। व्यक्ति समष्टि में विलीन होकर ही विराट होता है। बूंद समुद्र में मिलकर समुद्र हो जाती है। सागर क्या है? बूंद-बूंद का संग्रह ही सागर है। बूंद जब सागर में समाहित होती है तब वह बूंद नहीं रहती सागर बन जाती है। एकत्त्व का विराट बोध, सागर है।

अन्तर्बोध

अनुकम्पा ही जगाती है अनतर्बोध। जैसे मेरा अस्तित्त्व है, वैसे सबका अस्तित्त्व है। जैसे मुझे सुख प्रिय है, वैसे सबको सुख प्रिय है। जैसे मुझे अपना जीवन प्रिय है, वैसे सबको अपना जीवन प्रिय है। अत: मुझे सबके साथ वही व्यवहार करना चाहिए जो मैं अपने लिए चाहता हूँ।

अगर कोई पीड़ित है, दु:खी है, असहाय अवस्था में है तो उसे सुख देने के लिए मुझे प्रयास करना चाहिए। कोई विपदाग्रस्त है, तो उसकी विपदा दूर करने का प्रयास मुझे करना चाहिए।

यह जागृत अन्तर्बोध बोधिबीज है जो जिनत्व का विराट कल्पवृक्ष बनता है। सम्यक्त्व का उद्भूत स्वरूप है, जिसकी पूर्णता सिद्धावस्था है। उक्त बोधि की पूर्णता ही बुद्धत्व है। तीर्थंकरों की धर्मदेशना यही तो है। महान् भाष्यकार जिनदास ने कहा है–

जं इच्छसि अप्पणतो,
जं न इच्छसि अप्पणतो,
तं इच्छ परस्स वि,
एत्तियगं जिन सासणयं।

जो तुम अपने लिए चाहते हो वह दूसरों के लिए भी चाहना और जो अपने लिए नहीं चाहते हो वह दूसरों के लिए भी नहीं चाहना बस इतना ही तीर्थंकरों का उपदेश है।

मनुष्य यदि यथार्थ में मनुष्य है तो किसी को कष्ट में देखकर उसका हृदय अनुकम्पा से कांप उठता है। उसके मन-प्राण आन्दोलित हो उठते हैं। वह कष्ट- निवारण के लिए तत्काल सारे करणीय उपाय करता है। पर दु:खकातर होकर प्राणीमात्र की सेवा में संलग्न हो जाना ही चेतना का विकास है, ऊर्ध्वारोहण है। जहाँ चेतना को ऋजुभावों की विशुद्धता में सहजानन्द की विलक्षण अनुभूतियों का स्पर्श होता है वह अन्य भावों में कहाँ हो पाता है? जीवन की अन्तरंग और बाह्य उभयत: सर्वमंगल विकास-यात्रा में भगवान महावीर ने अनुकम्पा के विधिपक्ष सेवा अर्थात् वैय्यावृत्य को प्रमुखता दी है। सेवा से चिन्तन में एवं भावों में **"सर्वभूतहित"** की व्यापकता आती है। सेवाभावी मन विनम्र, उदार और परस्परोपग्राही होता है।

जीवन, धर्म और दर्शन के शब्दसंसार में 'सेवा' एक ऐसा शब्द है जो उदान्त भावों का ज्ञापक है। मानवीय चेतना के क्षीर समुद्र के मन्थन से निकला अमृत कलश है। प्राणीमात्र से सम्बन्धित अपनत्व का सारगर्भित सूत्र है। मनुष्य को देवाधिदेव के पदपर अभिसिक्त करनेवाला रचनात्मक धर्म का पावन रूप है।

सेवाधर्म मनुष्य के वज्रमय अहं को गलाता है, नीच स्वार्थों के जंगलों को मिटाता है, प्रमाद में पड़े सुविधाभोगी सुषुप्त मन को जगाता है। भगवान महावीर और गणधर गौतम का एक बहुत ही सुन्दर परिसंवाद है, जो सेवा की महत्ता को उद्घाटित करता है।

जे गिलाणं पडियरइ से धन्ने–

इन्द्रभूति गौतम भगवान महावीर के प्रथम गणधर हैं। गणधर का अर्थ संघ को धारण करनेवाला। अर्थात् भगवान महावीर के संघ का पूरा दायित्व गणधर गौतम वहन करते हैं। महान श्रुतधर हैं। उन्होंने भगवान से पूछा, 'भगवान!' आपका एक भक्त दिनरात आपकी पूजा-अर्चना करता है। आपके नाम का जाप करता है। तथा एक दूसरा भक्त दीन-दुखियों की सेवा में संलग्न है। उसने अपने आपको सेवा में इतना भुला दिया है कि आपकी सेवा-पूजा के लिए उसे अवकाश ही नहीं मिल

पाता। भन्ते! दोनों में श्रेष्ठ कौन है?

भगवान महावीर ने स्पष्ट उत्तर देते हुए कहा– "गौतम! जो दीन– दुखियों की सेवा करता है, वह श्रेष्ठ है, वही मेरे धन्यवाद का पात्र है।" **"जे गिलाणं पडियरइ से धन्ने।"** गौतम विचार में पड़ गये कि यह क्या कहा प्रभु ने। भगवान की सेवा के सम्मुख दु:खियों की सेवा का क्या महत्त्व? धन्यवाद का पात्र तो वह है जो साक्षात् प्रभु की सेवा करता है।

गौतम ने पुन: जिज्ञासा व्यक्त की– भगवान! यह कैसे? कहां सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा की सेवा, और कहां सामान्य पामर प्राणी की सेवा? भगवान ने कहा, "गौतम! मेरी सेवा, मेरी आज्ञा का पालन है। और मेरी आज्ञा है– प्राणीमात्र के प्रति दयाभाव, पीड़ितों की सेवा। अत: दु:खियों की सेवा करनेवाला धन्य है।" वस्तुत: जनसेवा ही जिनसेवा है। यह भव्य आदर्श भगवान महावीर और गणधर गौतम का उक्त संवाद प्रस्तुत करता है।

सेवा है आभ्यन्तर तप–

अनुकम्पा की भावधारा में सेवा एवं वैयावृत्य से जनहित तो होता ही है साथ-साथ आत्मोन्नति एवं आत्मशुद्धि की साधना भी प्रशस्त होती है। तीर्थंकर महावीर एवं उत्तरकालीन महान श्रुतधर आचार्यों ने आत्म साधना के एक अभिन्न अंग के रूप में सेवा का निरूपण किया है। व्यवहार सूत्र में उल्लेख है– **"गिलाणं वेयावच्चं करेमाणे समणे निग्गंथे"** रूग्ण साथी की सेवा करता हुआ श्रमण महान् निर्जरा और महान् परिनिर्वाण प्राप्त करता है।

"समाध्याधान विचिकित्साभाव
प्रवचन वात्सल्याद्यभिव्यक्त्यर्थम्"

सर्वार्थसिद्धि का यह वाक्य है। समाधि की प्राप्ति विचिकित्सा का अभाव और प्रवचन वात्सल्य की अभिव्यक्ति के लिए वैयावृत्य किया जाता है। केवल स्वाध्याय करनेवाला स्वयं की ही आत्मोन्नति कर सकता है जबकी वैय्यावृत्य करनेवाला स्वयं को और अन्य को, दोनों को उन्नत करता है। भगवती आराधना में कहा है–

आत्म प्रयोजन परो एव
जायते स्वाध्यायमेव कुर्वन्।
वैय्यावृत्य करस्तु स्वं
परं चोद्धरतीति मन्यते॥

यही कारण है कि तीर्थंकरों के संघ के साधकों की उत्तमचर्या एवं चिन्तन प्रक्रिया सेवा के मार्ग से गतिमान है। शिष्य गुरूचरणों में प्रात:काल तप स्वाध्यायादि साधना करने की आज्ञा लेने उपस्थित होता है तो गुरू सर्वप्रथम उसे संघ में यदि कोई रोगी है तो उसकी सेवा का आदेश देते हैं। संघ में यदि कोई अस्वस्थ हो, तो उस दिन उपवासादि तप छोड़कर श्रद्धाभक्ति से सेवा-परिचर्या करनी चाहिए। यह संघीय अनुशासन की स्वस्वीकृत मर्यादा है।

सेवा के लिए गृहित उपवासादि तप छोड़ना पड़े तो सहर्ष छोड़ना चाहिए। ऐसा करने से तप भंग नहीं होता वरन् उससे भी अधिक उत्कृष्ट अंतरंग तप में स्थित होने से अधिक लाभ होता है। प्रवचन सारोद्धार वृत्ति में कहा है–

"महतां प्रत्याख्यानं पालनवशाल्लभ्य निर्जरापेक्षया बृहत्तरं निर्जरालाभ हेतुभूतं" इसी प्रकार आचार्य नमि प्रतिक्रमण वृत्ति में कहते हैं– **'महत्तरादेशेन भुंजानस्य न भंग:'**

यह पाठ वास्तव में एक उद्बोधक सूत्र है। इसमें स्पष्टतया सेवाभाव ही मुख्यतया प्रतिपादित है। भगवान महावीर ने तप की समीक्षा करते हुए तप के दो भेद बताये हैं– बहिरंगतप और अंतरंग तप। नवकारशी, पोरशी, उपवास आदि अनशन तप है। भूख से कम खाना ऊणोदरी तप है। अस्वाद के रूप में दूध, घी, मिठाई आदि का त्याग रसपरित्याग तप है। विविध प्रकार के आसन लगाना, शीत, गरमी सहन करना कायक्लेश तप है। निर्जन वन में एकान्त वास करना प्रतिसंलीनता तप है। ये सब बाह्यतप है और विनय, स्वाध्याय, ध्यान तथा कायोत्सर्ग की तरह वैयावृत्य अन्तरंग तप है। अन्तरंग तप आत्मशुद्धि का साक्षात् हेतु है और बहिरंग तप अन्तरंग तप के माध्यम से आत्मशुद्धि का पारम्परिक हेतु है।

सेवा अर्थात् वैय्यावृत्य में इच्छाओं का संयम, वैयाक्तिक स्वार्थ का विलय,

व्यक्तिनिष्ठ सुख का त्याग एवं अहं का विसर्जन है। इस अर्थ में सेवा कोई सामान्य उपक्रम नहीं, अपितु एक महान् साधना है, तप है और वह भी अन्तरंग तप है।

प्रभु के प्रवचन का हेतु है सर्वजीव रक्षा–

भगवान महावीर ने साढ़े बारह वर्षोंकी कठोर साधना से कैवल्य पा लिया। जो पाने जैसा था वह सबकुछ उन्हें प्राप्त हो गया था। कुछ भी ऐसा शेष नहीं बचा था जो पाने जैसा बाकी रह गया हो। जो जानने जैसा था, वह सब जान लिया था। कुछ भी जानने जैसा उनके लिए शेष नहीं था, तो क्या कारण रहा होगा कि भगवान महावीर केवलज्ञान प्राप्ति के बाद, अरहन्त होने पर भी तीस वर्ष तक लगातार एक राज्य से दूसरे राज्य में, एक गांव से दूसरे गांव में विशाल धर्मसंघ के साथ विहार करते रहे। प्रहरों तक धर्मदेशना देते रहे। साधारण-असाधारण, श्रेष्ठ-कनिष्ठ,

ऊँचे-नीचे, जाति-वर्ग, देश के भेद के बिना सबको धर्मबोध देते रहे। उनकी समस्याओं का समाधान करते रहे, जिज्ञासाओं का समाधान करते रहे। यह सब क्यों करते रहे?

गणधर सुधर्मा कहते हैं- **"सव्वजगजीव रक्खण दयट्ठयाए भगवया पावयणं सुकहियं।"** जगत के प्राणियों की दया के लिए, रक्षा के लिए भगवान ने प्रवचन दिया। रक्षा, दया, अनुकम्पा ही एकमात्र हेतु है। जिस कारण से प्रभु ने प्रवचन दिया है।

आत्मा का घात करनेवाले घातीकर्म के सम्पूर्ण क्षय हो जाने पर, पूर्ण वीतराग हो जाने पर तीर्थंकर की दया, अनुकम्पा क्या है? सर्वज्ञ होने पर परभाव, परकृत जैसा कुछ नहीं होता। मोह, क्षोभ आदि तो सत्ता में भी नहीं रहते। जो भी है वह एकमात्र आत्मभाव, परम विशुद्ध आत्मभाव है।

उपर्युक्त पद्धत्ति से सभी दृष्टिकोणों से विचार करने पर स्पष्ट परिलक्षित होता है कि 'सेवा' वह आत्मभाव है जिससे सद्वृत्तियों के जनमंगलकारी नये आयामों का विस्तार होता है। और सर्वोत्तम विश्वमंगलकारी तीर्थंकर पद का उपार्जन होता है।

असद् वृत्तियों की गति अवरूद्ध होती है; अर्थात् संवर होता है। अनासक्त निरभिमान और विशुद्ध भाव में पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा होती है। संवर और निर्जरा से अन्य और क्या मोक्षमार्ग है एवं अन्य क्या अर्थ है? सेवा धर्म है। सेवा स्वभाव धर्म है।

सूर्योदय के साथ प्रकाश फैलता है। फूल खिलता है। फूल की सुगन्ध महक उठती है। यह स्वाभविक ही है। आत्मा के साथ अनुकम्पा और अनुकम्पा भाव की अभिव्यक्ति वैयावृत्य अर्थात् सेवा भी सहजता से, स्वाभाविक रूप से होती है।

मानवता के तीन गुण

हृदय मक्खन-सा कोमल
दिमाग बर्फ-सा ठण्डा
और
जीभ सक्कर-सी मीठी।

-Anne Vallely

क्या किसी की पीड़ा को अनदेखा करना आध्यात्मिकता है?–

आमतौर पर विद्रोह को जैन त्यागियों के साथ नहीं जोड़ा जाता क्योंकि साधु व साध्वी के जीवन को अहिंसक कृति, वाणी और यहाँ तक कि विचारों को भी नियन्त्रित करनेवाले सख्त से सख्त नियमों के पालन से नियन्त्रित किया जाता है। लेकिन आचार्य चन्दनाश्रीजी (श्री ताई मां) का जीवन स्वतंत्र विचार ओर अपरंपरागत सोच की भावना से विशिष्ट रहा है। फिर भी एक जैन साध्वी को घेरनेवाले सभी प्रयास के लिए उनकी विद्रोहीता एक अप्रत्याशित स्रोत से उभरती है। और वह है पीड़ित लोगों के लिए अत्यन्त गहन करूणा। उनके लिए तो करूणापूर्ण कार्य ही हमेशा योग्य है, चाहे मार्ग में कितनी बाधाएँ आये। उनका स्पष्ट दावा है कि दूसरों की पीड़ा को अनदेखा करना आध्यात्मिकता नहीं है। उनके कार्य पूरजोर इस विचार की घोषणा करते हैं कि करूणा स्वयं प्रामाणिक ज्ञान है जो आन्तरिक दृष्टि प्रदान करता है। कोई भी चीज जो करूणा की मुक्त अभिव्यक्ति को बाधित करती है वह धर्म या अध्यात्म नहीं हो सकती।

हम एक तरह से उस टूटी दुनिया में रहते हैं जो असहिष्णुता और भेदभाव से ग्रस्त है। इसका एकमात्र कारण है- करूणा का अभाव।

आत्मा का स्वभाव है करुणा–

श्री ताईमां का कहना है कि इसका उपचार तब शुरू होता है जब हम अपने आस-पास की दुनिया पर भावनात्मक ध्यान देना शुरू करते हैं क्योंकि आत्मा का स्वाभाविक गुण है- दया और करूणा। वस्तुतः श्री ताईमां करूणापूर्ण कार्यों की शक्ति के जीवित प्रमाण है। उनकी उपलब्धियाँ चौका देनेवाली हैं। और इससे भी अधिक उनके उल्लेखनीय स्रोत को देखे तो वे एक साध्वी है जिनके पास खुद का एक भी अधिकार नहीं है

फिर भी दुनियाभर में सबसे सफल मानवीय प्रयासों में वे एक प्रेरक जैनसाध्वी है। कोमल हृदय और वज्र संकल्प के साथ अपने करूणापूर्ण कार्यों के लिए वे दुनिया के सबसे दुर्जेय अधिवक्ताओं में से एक हैं।

करुणा में भेद रेखा नहीं होती–

तीर्थंकर महावीर की दृष्टि में सभी जीवित प्राणी-मनुष्य, पशु-पक्षी, कीड़े और यहाँ तक कि पौधे भी अपनी जन्मजात क्षमता में एक दूसरे के समान आत्मा से सम्पन्न हैं। हाला कि मुक्ति की दिशा में प्रयत्न करने की क्षमता में वे अत्यन्त भिन्न हैं। शरीर और आत्मा के बीच अन्तर करने में मनुष्य के सक्षम होने और उसके लिए अहिंसक एवं करूणामय जीवन जीने के द्वारा आध्यात्मिक प्रगति करने का विशेष अधिकार प्राप्त है। करूणा संसारिक और धार्मिक के बीच भेद नहीं जानती, वह केवल आवश्यकता को जानती है। जहाँ आवश्यकता हो वहाँ प्रतिक्रिया करती है। अपनी पुस्तक "वाकवीद मी" में श्री ताईमां ने महावीर को यह कहते हुए उद्धृत किया है कि "जब हम प्यार से दूसरों की सेवा-सहायता करते हैं तो हमें खुशी होती है क्योंकि हमारा शुद्ध अहिंसक भाव उस समय हमारी आत्मा की वास्तविक प्रकृति के अनुरूप होता है।"

परंपरा धर्म नहीं है-

आचार्य चन्दनाश्रीजी का जन्म 26 जनवरी 1937 को महाराष्ट्र के पुणे में एक सम्पन्न जैन परिवार में हुआ। माता-पिता ने

उन्हें जो नाम दिया वह भविष्य का सूचक रहा। शकुन्तला का शाब्दिक अर्थ है- **"पक्षियों द्वारा संरक्षित।"** साध्वी बनने पर नाम बदलने के बाद भी पक्षियों के साथ उनका अलौकिक सम्बन्ध है।

मैत्री की अभिव्यक्ति का अंदाज–

लेखक के साथ एक साक्षात्कार में उन्होंने पक्षी प्रेम की एक घटना बताई। उन्होंने अपना अनुभव बताया कि पक्षी भी मित्रता का व्यवहार करते हैं। उनके अपने शब्दों में– "मैं प्राय: बाहर खुले बराण्डे में नाश्ता लेती हूँ उस समय गिलहरी, मैना, तोते और कौवे भी आते हैं और साथ में नाश्ता करते हैं। एक बार नाश्ते के बाद वहीं पर बैठकर कॉपी पेन्सिल लेकर मैं लिखने लगी तो वह तोता जिसका नाम मैंने खुशबु रखा था आकर मेरे कन्धे पर बैठ गया, जैसे कि उसकी आदत थी। मैंने अपना लिखना चालु रखा। लेकिन उसे यह अच्छा नहीं लगा। वह मानो मेरे से बात करना चाहता था। उसने कंधे से हाथ पर आकर हाथ की लेखनी खींच कर नीचे डाल दी। मैं उसकी इस नटखट बच्चे-सी हरकत देखती रही। और पुन: पेन्सिल उठाकर लिखने लगी। पुन: खुशबु ने

अपनी हरकत दोहराई। मैंने उसे कहा, थोड़ा-सा लिखना है खुशबु! मुझे लिखने दे। लेकिन तिसरी बार भी उसने मुझे असफल कर अपनी बात मनवाली कि मैं उसके साथ बातें करूं और उसकी बातें सुनुं। उसे जो गुप्तगु करनी थी करके तथा कुछ क्षणों के लिए अपनत्व भरी अदाये करके मानो पुन: आता हूँ कहकर गगन विहारी हो गया। यह उसकी मैत्री भाव की अभिव्यक्ति थी।"

शकुन्तला जानवरों से भी प्रेम करती थी। उनके दु:खों को दूर करने का प्रयत्न करती थी। अभी भी ताई माँ जो पशु मिले उसके साथ दोस्ताना व्यवहार रखते हैं। उनका कहना है कि जानवर हमारे छोटे भाई है। उनके सुख में हमारा सुख है। अत: उन्हें दु:खी न करना हमारा कर्तव्य है। ताई माँ वृद्ध, दुर्बल, दु:खी, वंचित को देखकर द्रवित हो जाते हैं और उनकी मदद में जुट जाते हैं। बचपन में जब शकुन्तला को कुछ मूल्यवान दिया जाता तो वह तुरन्त दूसरों के साथ साझा करती थी। अपनी मां की जानकारी के बिना वह घर से अपनी जेब में मिठाइयाँ भरकर गांव के जरूरतमंद बच्चों में बांट देती थी।

शकुन्तला ने चोरी की–

एक बार उसने देखा कि बहुत से बच्चों के पास पेन्सिल्स नहीं है तो उसने चुपके से मां की अलमारी से पैसे लेकर दुकान से बहुत-सी पेन्सिले खरीदी और स्कूल में जिनके पास नहीं थी उन सबको पेन्सिलें बांट दी। यद्यपि स्कूल के प्रिन्सीपल से व घर के बड़ों से उसे सीख मिली कि चोरी करना ठीक नहीं है। लेकिन शकुन्तला ने सदा दुसरों की जरूरतों को प्राथमिकता दी। वह करूणा के लिए नियम तोड़ने के परिणामों का सामना करने के लिए तैयार रहती थी। करूणा ने उसके हर कार्य को नियन्त्रित किया था। करूणा की उसकी इस सहज भावना ने उसे फटकार लगने पर भी कार्य करने का साहस दिया है।

दीक्षा है अध्ययन और सेवा–

उसके इन असाधारण गुणों ने उसे बचपन में ही त्यागमार्ग के अनुकूल बना दिया। जिस मार्ग को उसके नाना ने अध्ययन और सेवा के मार्ग रूप में वर्णित किया था। 1952 में केवल 14 वर्ष की आयु में उन्होंने आचार्य आनन्दऋषिजी के नेतृत्व में श्वेताम्बर स्थानकवासी परंपरा में दीक्षापथ पर कदम रखा। और वह शकुन्तला से साध्वी चन्दना की संज्ञा जो महावीर की प्रथम शिष्या चन्दनबाला रही, उस ऐतिहासिक नाम से प्रसिद्ध हुई। उस समय किसने सोचा था कि वे जैनधर्म के सबसे शानदार आध्यात्मिक नेताओं में से एक तथा जैन परंपरा में पहली-पहली महिला आचार्य बनेगी।

सेवा पर प्रतिबन्ध उन्हें नागवार लगा–

आचार्य चन्दनाजी के जीवन पर वृत्तचित्र जिसका शीर्षक है "नेवर बिफोर" में कहा है कि आध्यात्मिक विकास का कठिन मार्ग उनके लिए पूरी तरह से स्वाभाविक था,

उसमें उन्हें कोई कठिनाई नहीं थी लेकिन सेवा पर प्रतिबन्ध उन के लिए मुश्किल था कि न वे भूखों को भोजन दे सकेगी और न बीमारों की देखभाल कर सकेगी। दीक्षा के बाद ताई मां ने मौनव्रत अपनाया। जिससे कि वे पूरी तरह से शास्त्रों का अध्ययन कर सके। 12 वर्षों की इस अवधि में उन्होंने गहनता से शास्त्रों का अध्ययन किया। धर्मग्रन्थों के साथ न्याय, दर्शन, व्याकरण का व्यापक अध्ययन, मनन, चिन्तन के बाद इस निर्णय पर पहुँचे कि 'सक्रिय करूणा' वास्तव में महावीर के पथ का एक अभिन्न अंग है। और उन्होंने कालबाह्य प्रचलित प्रथा तथा परंपराओं को चुनौती देना शुरू कर दिया। उन्होंने कहा कि 'सेवा' तपस्या से अथवा अध्यात्म से भिन्न नहीं है। वस्तुत: महावीर के दर्शन को संकीर्ण करके उसे कर्मकाण्डों में सीमित किया जा रहा है तथा वर्तमान दुनिया की परेशानियों को नजर अन्दाज किया जा रहा है। महावीर का धर्म सर्वहितंकर, स्व-पर कल्याणकारी धर्म है। परहित स्वहित से अलग नहीं है। वस्तुत: दूसरों का हित ही स्वहित है।

गुरुदेव का आशीर्वाद–

श्री ताईमां के इन क्रान्तिकारी विचारों को समर्थन और आशीर्वाद मिला गुरूदेव उपाध्याय श्री अमरमुनिजी महाराज का, जिन्होंने 1962 में तीर्थंकर महावीर की समवसरण भूमि राजगृह के वैभारगिरि गुफा में चार महिने ध्यान साधना की थी। और वहाँ की जनता की दु:स्थिति को देखकर द्रवित हुए थे।

संयोग ऐसा बना कि श्री ताई मां को भी महावीर के पांचों कल्याणकों की यात्रा करने के बाद इसी समोशरण भूमि के परमाणुओं ने आकर्षित किया और 1973 में वहाँ वीरायतन संस्थान को प्रतिष्ठित किया गया। यह पावन अवसर था भगवान महावीर के पच्चीस सौवें निर्वाण महोत्सव का। क्षेत्र अपरिचित था, भूमि बंजर थी, लोगों में संदेह और अविश्वास था, समस्याएँ अनगिनत थी और साथ था मात्र अपने 5 साध्वीसंघ का। लेकिन पूज्य ताईमां के हौसलें बुलन्द थे, संकल्प दृढ़ था। और जो हुआ, वह किसी चमत्कार से कम नहीं है।

क्यों नेत्र शिविर–

पूज्य ताई मां ने बिहार की भूमि में पहुँच कर सर्वप्रथम वहाँ की जनता के दु:ख तकलीफों को जाना और उन्होंने पाया कि जनता मोतियाबिन्द के कारण अन्धेपण का कष्ट पा रही है। अत: सबसे पहला काम उन्होंने मुफ्त नेत्र शिविर के आयोजन का किया। और निरन्तर के इन मुफ्त नेत्र शिविरों द्वारा लोगों को दृष्टि मिली, विश्वास जगा। और 1986 में विशाल "नेत्र ज्योति सेवा मंदिरम्" 175 बेड का आइ हॉस्पिटल बन कर तैयार हुआ जो अत्याधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न है। जिसमें अब प्रतिवर्ष 15000 आंखों

के ऑपरेशन और 2,00,000 नेत्र रोगियों की चिकित्सा होती है। दन्त चिकित्सा भी होती है और मोबाइल वेन द्वारा गांव-गांव पहुँचकर लोगों को शाकाहार तथा पर्यावरण के प्रति जागरूकता के संदेश के साथ निशुल्क नेत्र चिकित्सा की जाती है।

शिक्षा–

अगले कई वर्षों में वीरायतन ने शिक्षा क्षेत्र में खूब विस्तार किया। कई प्राथमिक, माध्यमिक विद्यालयों के साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों और व्यावसायिक कॉलेजों का निर्माण किया। जहाँ दस हजार विद्यार्थी उच्च गुणवत्तायुक्त शिक्षा ग्रहण करते हैं।

वीरायतन मात्र संस्थान नहीं विचार है–

वीरायतन मात्र एक संस्थान ही नहीं विचार है। सकारात्मक अहिंसा का क्रियात्मक रूप है वीरायतन। जो देश-विदेश में कार्यरत है। जहाँ समय-समय पर शिक्षा, स्वाध्याय, साधना ध्यान के प्रयोगों से जनता तक, युवापीढ़ी तक प्रभु महावीर के संदेश पहुँचाने के आयोजन होते हैं। सेवा के माध्यम से लोगों के हृदय में करुणा के बीज बोये जाते हैं। शाकाहार, व्यसनमुक्त जीवन और पर्यावरण सुरक्षा संस्कार हेतु जितना प्रयास विद्यार्थियों के लिए किया जाता है उनता ही पेशेन्ट्स के लिए भी होता है।

महत्त्वपूर्ण महान कार्य एवं महान पद पर प्रतिष्ठा–

पूज्य ताईमां की इन उपलब्धियों के लिए एवं उनके कुशल नेतृत्व के लिए उपाध्याय अमरमुनिजी महाराज एवं प्रबुद्धवर्ग ने उन्हें 1987 में आचार्य पद के सम्मान से सम्मानित किया। लेकिन जैसे उनकी सामाजिक सक्रियता विवादों में घिरी थी उसी तरह उनके आचार्यत्व ने भी विवादों को जगा दिया था। क्योंकि महावीर के बाद आचार्य पद केवल और केवल भिक्षुओं के लिए ही सुरक्षित था। लेकिन ताईमां एक ऐसा व्यक्तित्व है जो लोगों की राय नहीं, लोगों के दु:ख-दर्द जानने और उसे दूर करने में प्रयत्नशील रहते है। उन्होंने इस सम्मानित आचार्यपद को अत्यन्त विनम्रता से ग्रहण किया यह कहते हुए कि "मैं इस पद को मातृजाति के सम्मान के रूप में स्वीकार करती हूँ।" भगवान महावीर के युग में भी आचार्य चन्दना 36000 साध्वियों के प्रमुख पद पर पूजनीय रही है। और आज आचार्य चन्दनाश्रीजी करूणा, नैतिकता और जनकल्याण पर आधारित उनके दूरदर्शी नेतृत्व के साथ प्रभु महावीर के संदेश को देश-विदेश में दूर-दूर तक पहुँचा रहे हैं। यूएस(1993) यूके(1995) केन्या(1997) में भी उन्होंने शैक्षिक केन्द्र खोले हैं।

2001 के कच्छ भुज के भयावह भूकम्प के बाद सबसे पहले पहुँचकर उन्होंने वहाँ आपदा प्रबन्धन शुरू किया। **वीरायतन के प्रयासों पर रिपोर्ट करते हुए न्यूयॉर्क टाइम्स**

ने लिखा है- "राहत कार्यकर्ता एवं स्थानीय अधिकारी कहते हैं कि "वीरायतन बच्चों के लिए स्टॉपगेप स्कूल प्रदान करने का सबसे बड़ा, सबसे ईमानदार और सबसे अच्छा प्रयास है।"

वीरायतन ने 2004 की सूनामी, 2006 की बाढ़, 2008 की कोशी की बाढ़ एवं 2015 के नेपाल के विनाशकारी भूकम्प में आपातकालीन राहत प्रदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

करुणा का निरन्तर प्रवाह–

ताईमां ने अपने द्वारा किये जा रहे कार्य को परिभाषित करने के लिए Compassion in action के आदर्श वाक्य को अपनाया। उनके सामाजिक कार्यों ने उन्हें जैन समाज में सबसे विवादास्पद व्यक्ति बना दिया था। निश्चित रूप से उन्होंने जो शैक्षिक और मानवीय कार्य किया है वह अपने आप में विवादास्पद नहीं है। बल्कि इसकी जैन और गैर-जैन समान रूप से सराहना करते हैं। ताईमां के अनुसार सेवा आध्यात्म से अलग नहीं है। उन्होंने अपनी पुस्तक "वाक वीद मी" में महावीर के जीवन को करूणा के निरन्तर प्रवाह के रूप में दर्शाया है। उन्होंने अपने आखिरी वस्त्र को भी एक गरीब व्यक्ति को दे दिया था। वे जब गर्भ में थे तब माता को दर्द न हो इसलिए हिलना बंद कर दिया था। लेकिन जब उन्हें एहसास हुआ कि मेरी अनुपस्थिति माता को व्याकुल कर देती है तो उन्होंने निश्चय किया कि मैं माता को कष्ट हो ऐसा व्यवहार नहीं करूंगा। इसीलिए उन्होंने जबतक माता-पिता जीवित रहे गृहत्याग नहीं किया। और बारह वर्ष की आध्यात्मिक खोज के दौरान जब उन्हें क्रोधी, अज्ञानी से शत्रुता का सामना करना पड़ा तो उनकी एकमात्र प्रतिक्रिया करूणा की थी। आत्मज्ञान प्राप्त करने के बाद अपना जीवन आनन्द में जीने के बजाय दूसरों को दु:ख समाप्त करने का मार्ग सिखाने का कठिन मार्ग चुना।

श्री ताईमां महावीर के जीवन का अनुकरण करके उनकी करूणा का एक सतत प्रवाह बनना चाहते हैं। अनेकान्तवाद के सिद्धान्त के तहत उनका कहना है कि आत्ममुक्ति हमारी साधना का केन्द्रबिन्दु हो लेकिन हमारी साधना का लक्ष्य दूसरे जीवों की पीड़ा को कम करने के लिए होना चाहिए।

पिछले पांच दशकों में अनेकों उल्लेखनीय मानवीय कार्यों को प्रज्वलित करते हुए वीरायतन का आदर्श वाक्य 'Compassion in action' रहा है। ताई मां का मानना है कि "करूणा से कार्य करना हमारी आत्मा की वास्तविक प्रकृति के अनुरूप होना है।" क्योंकि करूणा स्वाभाविक रूप से दूसरों की पीड़ा के जबाब में पैदा होती है। श्री ताईमां के उल्लेखनीय जीवन से बड़ा इसका दूसरा कोई प्रमाण नहीं है।

■■■

विवेक उठा आवरण हटा

- उपाध्याय अमरमुनि

अनन्त तीर्थंकरों की शाश्वत वाणी है कि हर आत्मा अनन्तज्ञान की धारक है, अनन्त प्रकाश से परिपूर्ण है। इसी अनन्त सत्य की अनुभूति के लिए निकल पड़े थे वर्द्धमान महावीर। सबकुछ प्राप्त था फिर भी, कुछ भी प्राप्त नहीं था। उस आत्मा ने एक प्रकाश जागृत किया।

सोयी हुई ज्ञानचेतना में एक जागरण आया

हर आत्मा अपने अन्दर अनादिकाल से प्रकाश सम्पन्न है। ज्योति अन्दर दबी पड़ी है। प्रकाश अन्दर है फिर भी ठोकरें खाता है। क्योंकि ज्योति पर ज्ञानावरण पड़ा है। जबतक दीपक पर आवरण है, तबतक घर में घरके ही आदमी ठोकर खाते हैं। प्रकाश है लेकिन उसपर आवरण है अत: ठोकर खा रहे हैं। भगवान महावीर ने विलक्षण शब्द का प्रयोग किया है "ज्ञानावरण" अज्ञान शब्द का प्रयोग नहीं किया क्योंकि ज्ञान का अभाव नहीं है आत्मा में। अज्ञान का सीधा अर्थ अभाव है, ज्ञान का इन्कार है। वस्तुत: आत्मा में ज्ञान का अभाव नहीं है लेकिन आवरण आया है अत: वह भिखारी बना घुमता है, मांगता है कि कहीं से उसे ज्ञान मिले।

पानी में मीन पियासी

कबीर कहते हैं, 'अनन्त आनन्द का स्रोत अन्दर बह रहा है और वह बाहर खोज रहा है। मछली प्यासी है, एक-एक बूंद के लिए तरस रही है। **"पानी में मीन पियासी**

मोहे सुन-सुन आवत हासी।" पानी में थोड़े बहुत पानी में नहीं, अपार सागर में, अनन्त सागर में मछली प्यासी है। पगली मछली एक-एक बूंद के लिए हाय-हाय कर रही है। हंसी आती है उसपर। जबकि उसके चारो ओर पानी ही पानी है। मनो नहीं टनों पानी है उसके अगल-बगल, ऊपर-नीचे। और वह पानी-पानी पुकार रही है। कहती है हाय मैं प्यासी मर रही हूँ। कोई मुझे पानी दे दो। प्रश्न है कौन है वह नादान मछली और कौन है सागर। मनुष्य स्वयं ही है वह मछली और स्वयं के भीतर ही है वह ज्ञान का अथाह सागर। सुख का, आनन्द का सागर कहीं बाहर नहीं, स्वयं में ही है ज्ञान का अनन्त प्रकाश। आंखें अगर बन्द है तो रात है। प्रकृति की रात का तो समाधान है कि दीपक जला लो। लेकिन भीतर की रात का क्या समाधान?

सूर्यकोटि समप्रभः–

भगवान महावीर कहते हैं एक समाधान है कि आवरण हटा दो। नया कुछ नहीं लाना है। नया दीप क्या जलाओगे वह तो स्वयं प्रज्वलित है भीतर अनन्त काल से। लेकिन आवरण आया है। शक्ति तो है लेकिन अभिव्यक्ति नहीं है। तुम्हारा हाथ खाली नहीं है। तुम तो अमृत से परिपूर्ण हो। अमृत सागर लहरा रहा है तुम्हारे भीतर, तुम तेज से शून्य नहीं हो। **"सूर्यकोटि समप्रभः"** करोड़ों सूर्यों का प्रकाश जगमगा रहा है तुम्हारे अन्दर। सूर्य

को भी तुम ही प्रकाशित करते हो। सूर्य के अस्तित्व का बोध तुम्हारी अपनी रोशनी करती है। तुम्हारी अपनी आंख करती है। आंख तुम्हारी है, प्रकाश तुम्हारा है। कौन तुम्हे प्रकाश देगा? और कौन दे सकता है? भगवान महावीर ने कहा है कि एक द्रव्य का गुण दूसरे द्रव्य में हस्तान्तरित नहीं होता। एक द्रव्य का गुण दूसरे द्रव्य में संक्रान्त नहीं किया जा सकता। हर द्रव्य को स्वतंत्र कहा है महावीर ने। हर आत्मा अपनी स्वतंत्र ईकाई को लिए हुए है। हर आत्मा अनन्त ज्ञान के साथ स्वतंत्र है।

न दिया जाता है ज्ञान, न लिया जाता–

मैं दिल्ली से आगरा की ओर विहार यात्रा में था। मार्ग में जब मैं वृन्दावन पहुँचा, वहाँ गुरूकुल में विद्वानों से मिलने की भावना हुई। श्रावकों ने कहा कि हम व्यवस्था करते हैं कि वे आपके सान्निध्य में आये और विचार विनिमय करे। एक अहंकार होता है कि हम क्यों जाये उनके द्वार? वे आयेंगे हमारे पास। एक और अहंकार होता है कि विद्वानों के साथ बातचीत में कहीं हम छोटे न पड़ जाय। लेकिन

मैं तो सीधा ही चला गया गुरूकुल। आमतौर पर दर्शनशास्त्री सनकी होते हैं लेकिन विश्वेश्वरजी (विद्वान प्रोफेसर) का आचार्य पद विनम्रता और उदारता से सुशोभित था। जैसे ही मुझे आते देखा, वे झटपट उठ खड़े हुए। बड़े प्रसन्नता के क्षणों में बात हुई, गहन चर्चा हुई। और जब दर्शनशास्त्र के विद्यार्थियों के बीच प्रवचन हुआ तो मैंने उन विद्यार्थियों से पूछा, "आप यहाँ क्यों आये हो?" उनका उत्तर था, "हम ज्ञान प्राप्त करने आये हैं।" मेरा पुनः प्रश्न था, "क्या ज्ञान गुरूकुल के किसी भण्डार में भरा रखा है?" तब एक विद्यार्थी बोला, "हम आचार्य से ज्ञान पाने आये हैं।" मैंने प्रश्न को खोलकर पूछा कि अगर आचार्य के पास से आप ज्ञान लेंगे तो उनके ज्ञान में कटौती होगी न? वे देंगे, आप लेंगे तो वे खाली होंगे और आप भरेंगे? सब गड़बड़ा गये कि अब क्या उत्तर दे? तब मैंने कहा, देखो, एक व्यक्ति सोया हो और दूसरा व्यक्ति उसे आवाज लगाता है कि जागो, उठो। और वह सोया व्यक्ति जाग जाता है। जैसे जगानेवाला व्यक्ति अपना जागरण सोए हुए व्यक्ति में नहीं डालता, उसकी अपनी सुप्तावस्था के नीचे छुपा हुआ जागरण स्फुरित हो उठता है। चेतना सोई हुई थी, ध्वनि से जाग जाती है।

ज्ञानाधिकरणमात्मा

बस! यही बात है। ज्ञान तो तुम्हारा अपना है। क्योंकि आत्मा का लक्षण ही 'ज्ञान' है। ज्ञान का मूल आधार आत्मा है- "ज्ञानाधिकरणमात्मा" जहाँ ज्ञान है वहाँ आत्मा है और जहाँ आत्मा है वहाँ ज्ञान है। इसी प्रकार आत्मा नहीं तो ज्ञान नहीं। जहाँ ज्ञान नहीं वहाँ आत्मा नहीं। तुम आत्मा हो और तुम्हारी आत्मा ज्ञान से शून्य नहीं है। कोई आत्मा ज्ञान से शून्य नहीं होती। भगवान महावीर कहते हैं, आवरण चाहे कितना ही गहरा हो, फिर भी चेतना का छोटा-सा हिस्सा ज्ञानवान रहता है।

"अक्खरस्स अनन्त भागो
निच्चुग्घड़िओ भवइ।"

एक अक्षर के अनन्त हिस्से कर ले तो वह अनन्तवां हिस्सा जो है इतना सूक्ष्म अंश आत्मा का ज्ञान से जगमगाता रहेगा ही। अन्यथा चेतना, चेतना न रहकर जड़ हो जायेगा।

इस दृष्टि से महाप्रभु महावीर की वाणी केवल जगाने के लिए है। महावीर कहते हैं दिया हुआ सब बाहर का होता है। ज्ञान देने-लेने की बात नहीं है। ज्ञान तो भीतर है, वह बाहर है ही नहीं कहीं। अतः न उधार दिया

जाता है, न खरीदा जा सकता है और न भीख में दिया जा सकता है। गुरू तो बस औंधे पात्र को सीधा कर देता है, बन्द आंखों को खोल देता है, इसीलिए उन्हें चक्खुदयाणं कहते हैं। मार्ग देते हैं। अत: मग्गदयाणं कहा है। देखना स्वयं को है, चलना स्वयं को है। महावीर परम स्वतंत्रता की घोषणा करते हैं। वे गुलामी नहीं देते, गुलामी का हमारा भ्रम तोड़ देते हैं। उनका परम सूत्र है- **'अप्पा सो परमप्पा'।**

हर आत्मा परमात्मा है। द्वार पर किरणें दस्तक दे रही हैं और तुम द्वार दरवाजें बन्द कर अन्धेरे का रोना रोते हो। आंखें खोलो बस प्रकाश ही प्रकाश है। मुंह खोलो और बस पानी ही पानी है। आवरण हट जाय तो बस आनन्द ही आनन्द है।

■■■

तीर्थंकर महावीर विद्या मंदिर में आयोजित
बाल विज्ञान प्रदर्शनी में दिखाई प्रतिभा

तीर्थंकर महावीर विद्या मंदिर पावापुरी में शनिवार को बाल विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विद्यालय के चेयरमैन साध्वी डॉ. सम्प्रज्ञा जी के द्वारा विधिवत उद्घाटन किया गया। इस बाल विज्ञान प्रदर्शनी में छात्र-छात्राओं ने बढ़-चढ़कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। बाल वैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, प्राणिक एवं पर्यावरण संरक्षण को ध्यान में रखते हुए प्रदर्शनी का आयोजन किया। साथ ही साथ विद्यालय के विभिन्न साधनों के द्वारा भारतीय व्यंजन का प्रदर्शन किया गया। इस अवसर पर वीरायतन राजगीर के तरफ से साध्वी रोहिणी जी एवं समस्त वीरायतन परिवार व बच्चों के द्वारा साकारात्मक सोच को प्रोत्साहित करने के लिए उपस्थित थे। विद्यालय के प्राचार्य डॉ. कौशल किशोर कौशिक के द्वारा बच्चों के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखते हुए रचनात्मक क्रियात्मक एवं बौद्धिक विकास को केन्द्र में रखकर बाल विज्ञान एवं भारतीय व्यंजनों का आयोजन किया गया।

चदरिया झीनी रे झीनी

- गीता पारेख

मीठी लगदी गुरांदी वाणी ओ बेले अमरत देऽऽऽ मैं गुनगुना रही थी। ताई माँ के दर्शनों की भावना अन्तर्मन में हिलोरे ले रही थी और मैं झुले पर झुल रहीं थी। और तभी फोन झनझना उठा। समाचारों ने अमृत भर दिया कानों में कि मेरे गुरु ताई माँ (पद्मश्री आचार्य चन्दनाश्रीजी) हीरानन्दानी पवई बम्बई में विराजमान है। मैं समाचार सुनते ही उछल कर खड़ी हो गई। लगा कि फोन अगर व्यक्ति होता तो में उसका मुंह मीठा कर देती। मेरा मन मेरे खड़े होने से पहले भागकर ताई माँ के चरणों में पहुँच गया।

सच! 'गुरु' शब्द कितना मीठा है! कितना आल्हाददायक! जैसे "माँ" शब्द वात्सल्य का भण्डार है। यहाँ तो "गुरुमाँ" दोनों गुरु भी और माँ भी एक साथ है। आनन्दरस में सराबोर मैं दर्शनों के लिए तैयारी करने लगी। सोचने लगी क्या लेकर चलूं? ताई माँ का आहार अल्पतम, उसमें भी न खाने की सूची खूब लम्बी। कुछ तो वे चख सके। सामने कुरमुरे दिखे। उसे ही लेकर मैं चल दी। रास्ता केवल दस मिनट का था मेरे घर से। लेकिन ट्राफिक इतना कि चार घण्टे लगे पहुँचने में।

फिर भी मैं बोर नहीं हुई। क्योंकि मेरी मीठी स्मृतियाँ ताई माँ के प्रथम दर्शन से लेकर अबतक चित्रपट की भांति मेरे मानस पटल पर तैर रही थी।

सन् 1972 में पूज्य ताई माँ का कलकत्ता चातुर्मास था। तब एक दिन वे हमारे घर गोचरी लेने पधारे। मेरी माँ ने आहार देते-देते घर के सभी सदस्यों को पुकारा कि आओ, घर पर साध्वी भगवन्त पधारे हैं। सबलोग फटाफट पहुँच गये। मैं भी पहुँची। सबने आहार दान का लाभ लिया। धर्म-कर्म से अपने आपको दूर रखने में स्वयं की बुद्धिमत्ता समझनेवाली मैं सबकुछ ध्यान से देख रही थी। मैंने महसूस किया कि ताई माँ के दिव्य तेज में मेरा अहं पिघल रहा था। उनकी मृदुता, उनकी वाणी की मिठास, उनका अपनत्व सबकुछ मेरे अन्दर मानो प्रतिबिम्बित हो गये और मैंने अपने आपको अप्रत्यक्ष रुप से समर्पित कर दिया। कभी भी धर्मस्थानक में न जानेवाली मैं प्रतिदिन उनके दर्शन हेतु जाने लगी। धीरे-धीरे मेरा मन दीक्षित होने के लिए तैयार हो गया।

निर्णय दृढ़ता से नहीं कर पायी अत: माता-पिता ने मेरी शादी कर दी। लेकिन मेरा मन उनके चरणों में ही रमा रहा। वह कभी जुदा नहीं हो पाया। मेरा मन हमेशा उनकी खबर जानने के लिए प्रयत्नशील रहता। कई आंधियाँ आयी और गई उनके जीवन में। लेकिन हमेशा

वे अपने क्रान्त, उदार और समयोचित विचारों के साथ भगवान महावीर के प्रकाशमान मार्ग पर चलने का प्रयत्न करते रहे। और यथा स्थितिवादी, परंपरावादी समाज उन्हें विवादों में घेरता रहा। किन्तु ताई माँ तप्तकांचन की तरह आगे से आगे बढ़ती रही। इन सारी घटनाओं में डुबती-उतरती मैं जब पूज्य ताई माँ के चरणों में पहुँच गई तो चरणों से लिपट गई। पता नहीं क्यों आंखें बरसने लगी। वस्तुतः वह मेरी भक्तिधारा थी, अश्रुओं का अर्घ्य था।

पूज्य ताई माँ ने भरपूर आशीर्वाद दिये। और मेरे लाये कुरमुरे के कुछ दाने मुहं में रखे। अत्यन्त प्रसन्न मन से बोले, "बहुत अच्छे हैं तुम्हारे कुरमुरे।" मैं धन्य-धन्य हो गयी। मैं गद्‌गद् मन से उनके प्रेम की वर्षा का अनुभव करती रही। उनका यह प्रेम सर्वजन हिताय, सर्व जन सुखाय है। कितने कितने लोगों के जीवन को उनके इन प्रेमपूर्ण आशीर्वादों ने प्रकाशित किया है। कितनी ही जिन्दगियों को खुशियों से भर दिया है।

शाम को बड़े मुश्किल से मैं उनके चरणों से अलग होकर लौटने लगी। तो ताई माँ ने अपने सिग्नेचर युक्त उनकी अपनी एक सुन्दर चादर मुझे ओढ़ा दी। मैंने उस महनीय भेंट को सिर आंखों पर लगाकर स्वीकार की। चादर लेते हुए मेरा रोम-रोम पुलकित हो रहा था। मानो उनकी चादर ओढ़ने की मेरी चिर अभिलाषा पूर्ण हुई। मैंने ताई माँ से पूछा, मैं इसे अभी ओढ़े रखूं? उन्होंने कहा, जब-जब तुम अपनी प्रतिदिन की सामायिक साधना करती हो तब-तब ओढ़ना। मैंने उस अनमोल चादर को तबतक सीने से लगाये रखा जब तक घर नहीं पहुँची। घर पहुँचते ही मैंने चादर ओढ़ली और सामायिक साधना में बैठ गई। कैसे बताऊं कि उस चादर ने मुझे ताई माँ के कितने निकट ला दिया। वास्तव में अन्तेवासी बना दिया। यह चादर वस्तुतः मेरे आत्मोत्थान की प्रतीक है।

धन्य हो ताई माँ! ऐसे कितने-कितने लोगों को आप निस्पृह होकर आशीर्वाद देते हो। आनन्द लुटाते हो। गुरुमां! बस, आप खूब स्वस्थ रहे, हमारी आयु आप को लगे और आप हम सब जीवों पर आशीर्वाद बरसाते रहे।

मैं आपकी इस चादर को सदा उज्ज्वल और पावन रखूंगी। कभी मैली नहीं होने दूंगी। झीनी-झीनी रे चदरियाँ .....

तम की कारा तोड़ ज्योति के,
जगमग दीप जलाओ।
मानव जन्म तभी है सार्थक,
जब मानव बन जाओ।

-उपाध्याय अमरमुनि

जल ही जीवन है

विश्व की पहली सभ्यता सिंधु नदी के किनारे जन्मी थी इसलिए यह देश सिन्धुस्तान "हिन्दुस्नान" कहलाया। सिन्धु नदी के सूखने पर मोहनजोदड़ों और हड़पा नगरवासी इधर-उधर जा बसे और हिन्दू कहलाए। इतिहास साक्षी है कि निरन्तर होते आक्रमण से स्वर्णयुग खो गया। आज आजाद भारत जिस विषम सूखे का प्रकोप झेल रहा है तब यह कौन मानेगा कि यह वही धरती है, जहाँ विश्व का पहला मानवनिर्मित जलाशल बनाया गया था। सौराष्ट्र के शकनरेश रूद्रदमन ने सुदेषणा झील बनवाई थी। इसी गुजरात में जगह-जगह सीढ़ीदार कुएँ बने थे, जिन्हें आज विश्व आश्चर्यजनक रूप से **"स्टेपवेल्स ऑफ गुजरात"** के नाम से जानता है।

इसी तरह सारे राजस्थान में लोकहित के लिए बावड़ी बनावाई जाती रही हैं। सम्पूर्ण दक्षिण भारत में बने बड़े-बड़े जलाशय एवं जलस्रोत इतने सुनियोजित एवं सुव्यवस्थित तरीके से बनाए गए थे कि वर्षभर सिंचाई को भरपूर पानी मिलता रहे और वहीं सामाजिक समन्वय की व्यवस्था भी सूचारू रूप से चलती रहे। दो सदी पहले जब एक अंगरेज इंजीनियर सिंचाई परियोजना शुरू करने को भारत आया तो यहाँ की जल व्यवस्था में किसी और सुधार की गुंजाइश ही उसे न दिखी।

भरतपुर के पास डींग नामक स्थान पर जो किला है, खासतौर से ग्रीष्म ऋतु के लिए बनाया गया था। महल की दो मंजिलें पानी में डूबी रहने से बड़े-बड़े कमरों की दीवारें ओर फर्श आज भी ऐसे ठंडे है कि एयरकंडीशनिंग को मात देते हैं। दुर्भाग्यवश आज यह महल बदहाल पड़ा है।

इन्दौर के पास स्थित माण्डू के पहाड़ी टीले पर रानी रूपमती के रूपमहल में वर्षा के जल का ऐसा सुनियोजित प्रबन्धन था कि बादलों से सारा विशुद्ध जल छोटी-छोटी नदियों से होता हुआ महल के नीचे बने तहखानों में जाता था। यह जल हौज में एकत्रित होकर वर्ष भर के लिए काम आता था। बाजबहादुर का दो झीलों के बीच बना

जहाजमहल भी ऐसा ही था, जहाँ बारिश का पानी छोटी-छोटी नालियां से बहते हुए ढलाव वाले फर्श से होकर दोनों ओर बनी झीलों में जा गिरता था और इसी पानी को चूने और कोयले से शुद्ध करके सालभर के लिए इंतजाम किया जाता था।

आज राष्ट्र के कितने ही इलाकें बूंद-बूंद पानी को तरस रहे हैं, क्योंकि वर्तमान भारत में जल के बिना जीवन जल रहा है। हम किस तरह प्रदूषित जहरीली हवा में साँस ले रहे हैं। इस हवा से बने बादल बेमौसम ही बरसते हैं और फसल को नुकसान पहुँचाते हैं। कभी बेमौसम ओले बनकर तो कभी मूसलाधार बरस कर नुकसान पहुँचाते हैं।

आज जब जल संकट से पूरा राष्ट्र ग्रस्त है तो क्या वर्षा के जल को जमा करना अनिवार्य नहीं है? आखिर क्यों हर वर्ष सैकड़ों लीटर शुद्ध बारिश का पानी नालियों एवं सड़कों पर बहने दिया जाता है ओर बहता भी ऐसे है कि आम जनता घंटों तक लगे जाम से जूझने में मजबूर होती है।

यह वह देश है, जहाँ दो पीढ़ी पहले तक इतनी इनसानियत तथा उदारता थी कि लोग कुएँ खुदवाते थे। परमार्थ हेतु प्याऊ लगवाते थे, घरों के बाहर राहगीरों के लिए घड़ों में शीतल जल भर कर रखते थे। यहाँ तक कि पशुओं, गायों, घोड़ों के लिए पानी के हौद बनवाते थे। दुर्भाग्यवश जब से पानी का व्यवसायीकरण हुआ है, तब से प्यासे को पानी देने की हमारी प्राचीन परंपरा ऐसी टूटी कि पानी की प्लास्टिक बोतल सा हमारा दिल प्लास्टिक हो गया है, छोटा हो गया है।

उन बस्तियों की कल्पना करना मुश्किल है कि जहाँ सप्ताह में केवल एक बार टेंकर आता है। भले ही वे हमारे रिश्ते में कुछ नहीं लगते, किन्तु हैं तो हमारे ही राष्ट्र के नागरिक। आधि बाल्टी पानी के लिए घंटों की जद्दोजहद जो झेलते हैं। क्या हम एकमत होकर उन अपनों के लिए आज और अभी से यह प्रण नहीं कर सकते कि एक-एक बूंद पानी का संरक्षण करेंगे?

आज हमारे घरों में नल और फौवारें भले ही नहीं सूखते, किन्तु क्या हम आनेवाले कल के लिए भी इतने ही निश्चिन्त हो सकते हैं? शाश्वत सत्य यही है कि जल ही जीवन है, किन्तु उससे भी बड़ा आज का सत्य यही है कि जीवन आज जल रहा है। इस जल रहे जीवन को बुझाने के लिए शीतल जल की जरूरत है और इसके सुनियोजित व्यवस्थापन की गंभीर आवश्यकता है।

सव्वे कम्मा खयं जंति मोहनिज्जे खयं गये

-उपाध्याय अमरमुनि

कर्मबन्ध के विषय में दो प्रश्न है कि कर्मबन्ध जीव को होता है या जड़ को। और यह भी कि कर्मबन्ध स्वत: होता है या कोई हेतु है उसके पीछे?

बहुत लोग कहते हैं कि पत्थर तो एक ही है लेकिन उसके दो रुप देखे जाते हैं– एक भगवान की मूर्ति बन जाता है और एक भाग उसी पत्थर का रास्ते में ठोकरों में पड़ा रहता है। चांदी वहीं है एक भाग मुकुट बन गया तो एक पैर का कड़ा बन जाता है। कहते हैं यह कर्मों का खेल है। कर्मों के कारण ये शुभ-अशुभ अवस्थाएँ बन जाती है। लेकिन यह कथन गलत है। जड़ को कोई कर्मबन्ध नहीं होता।

कर्मबन्ध होता है जीव को। और कर्मबन्ध स्वत: नहीं होता। जीव के प्रयत्न से होता है। अपने आप होता तो सिद्धात्मा को भी होता लेकिन मुक्तात्मा को कोई कर्मबन्ध नहीं होता। यद्यपि कर्मवर्गना के अनन्तानन्त परमाणु सम्पूर्ण लोक में परिव्याप्त है। जहाँ मुक्तात्मा है वहाँ एकेन्द्रिय जीव भी हैं, निगोद के भी जीव हैं उनका कर्मबन्ध होता रहता है वहाँ हरक्षण कर्मबन्ध कर रहे हैं वे सूक्ष्मजीव। लेकिन सिद्धात्मा उस एक ही स्थान में होकर भी कर्मबन्ध नहीं करती।

इसका अर्थ यह है कि कर्मबन्ध अपने आप नहीं होता जीव के प्रयत्न से होता है। प्रयत्न दो प्रकार के होते हैं- शुभ और अशुभ। अब प्रश्न होता है कि कैसे होता है बन्ध?

शास्त्रकार कहते हैं–

'मिथ्यादर्शनाविरति प्रमाद कषाय योगा बन्ध हेतव:।' मिथ्यादर्शन अर्थात् आत्मदृष्टि का न होना। सत्याभिमुख दृष्टि का न होना। दूसरा कारण है अविरति- संसार की ओर का आकर्षण, पदार्थ के प्रति हमारी भाग-दौड़। उन

इच्छाओं से विरक्त न होना, हिंसा से, ममत्त्वभाव से, क्रोधादि कषायों से अपने आप को अलग न करना यह अविरति है। और यही प्रमाद है। असावधानी है। सद्कर्म के प्रति आदरभाव न होना, आलस्य होना प्रमाद है। राग-द्वेष में, अहंभाव में रहना कषाय है।

और अन्तिम कारण है योग जो बहुत ही हल्का एवं निर्लेप है। वस्तुत: जिसे कर्मबन्ध का हेतु कहा जाता है वह है मोहनीय कर्म। इसी में है मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद और कषाय। इसलिए इसे कर्म की जड़ या कर्मों का राजा कहा गया है। इसके क्षय होते ही सारे कर्म अपने आप नष्ट हो जाते हैं। **"सव्वे कम्मा खयं जंति, मोहनीज्जे खयं गये।"**

मोह को छोड़कर किसी भी कर्म से लड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। व्यर्थ है परिश्रम दूसरे कर्मों से टक्कर लेने का। वह जो मोह है मनुष्य के मन में चाहे दर्शन मोह के रूप में हो या चारित्र मोह के रूप में हो। इन्हीं दो भेदों का विस्तार है। मोहनीय कर्म के सम्पूर्ण रूप से नष्ट होने पर जब कैवल्य प्राप्ति हो जाती है ऐसी सर्वोच्च शुभ स्थिति में भी योग (मन, वचन, काया) की प्रवृत्ति जो रहती है तब कर्म बन्ध मात्र एक समय का होता है। समय मतलब अत्यन्त ही अल्पकाल। एक चुटकी बजाते है हम तो उसमें असंख्य समय व्यतीत होते हैं। आंख की पलक झपकती है तो उसमें असंख्य समय व्यतीत होते हैं। इतने अल्पतम समय का बन्ध केवलज्ञानी वीतराग परमात्मा को होता है। अर्थात् उसे बन्ध कहना यह मात्र व्यवहार है। जैसे हवा का झोका आया और निकल गया। हवा को तो पार होने में असंख्य समय लग भी जाते हैं। बस हवा आई और गई। वह चिपकती नहीं। ऐसे ही योग का जो बन्ध होता है वह एक समय का कर्म आया और झड़ गया।

बाहर में हिंसा मालुम पड़ रही है लेकिन कर्मबन्ध पुण्य का होता है। केवलज्ञानी को आठकर्मों में से केवल पुण्यबन्ध होता है। पुण्य याने योग। नामकर्म का उदय होने से मन गति करता है, वचन बोला जाता है, दिव्यध्वनि (व्याख्यान) होता है। विहार (शरीर की चेष्टा) होता है। सांस ले रहे हैं। बाहर की ये सारी प्रवृत्तियाँ चल रही है। क्रियाएँ जो होती हैं उनसे जो बन्ध होता है केवल पुण्यबन्ध, सातावेदनीय का बन्ध होता है।

सद्वेद्य सम्यक्त्व हास्यरति
पुरुषवेद शुभायुर्नाम गोत्राणि पुण्यम्

सद्वेद्य माने सातावेदनीय जो पुण्य प्रकृति है। मात्र पुण्य प्रकृति का ही बन्ध होता है।

वस्तुत: कषाय है बन्ध का हेतु, मोहनीय कर्म ही मूल है बन्ध का। जब मोहनीय कर्म निकल गया तो न अशुभ का बन्ध है और न कर्म की स्थिति लम्बी हो सकती है। अकेले योग से जो बन्ध होता है वह केवल एक समय मात्र का होता है और वह भी केवल और केवल पुण्य प्रकृति का।

अत: हमारा पुरुषार्थ कषाय विजय का पुरुषार्थ होना चाहिए। कषायों पर विजय अर्थात् मोहनीय कर्म पर विजय। राजा पराजित हो जाय तो उसकी सेना पर स्वत: ही विजय प्राप्त हो जाती है।

अविस्मरणीय दिन

गुरुमाँ साध्वी श्री सुमति कुंवरजी

3 जनवरी 2023 को गुरुमां साध्वीरत्न श्री सुमति कुंवरजी महाराज का जन्मदिन हीरानन्दानी पवई मुम्बई में मनाया। यह जन्मदिन न केवल वीरायतन में बल्कि दूर-सुदूर स्थानों में जहाँ-जहाँ उनके प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति सम्पन्न भाविक भक्त है उन्होंने भक्तिभाव से मनाया। उनकी सरलता, सौम्यता, मधुरता और सहजता की गुणगाथा प्रवाहित होती रही और नयी पीढ़ी उससे लाभान्वित होती रही। गुरुमां की मंगलपाठ की मंगलध्वनि मानों कानों में गुंजती रही और तप, जप, प्रार्थना, वन्दना के कार्यक्रम गतिमान होते रहे।

संयोग ऐसा बना है कि आचार्यश्री ताई माँ की सुशिष्या असंगवृत्ति सम्पन्न शतावधानी युवाचार्य साध्वीश्री शुभम्जी का परलोक गमन भी इस दिन के पूर्व 2 जनवरी 2020 को हुआ था। अत: उनका द्वितीय स्मृति दिवस प्रार्थना एवं गुणानुवाद के साथ जीवदया के कार्यक्रमों से मनाया गया।

युवाचार्य साध्वी श्री शुभम् जी

सम्माननीय है मातृजाति

-आचार्य चन्दना

प्रकृति की एक अद्भूत संरचना है नारी। यह एक ऐसा संगीत है जिसमें सहज तारतम्य, लयबद्धता, माधुर्य और संसार को आनन्दविभोर कर देनेवाला स्वर सौन्दर्य है। सृष्टि का समूचा सौन्दर्य, औदार्य सौहार्द एवं माधुर्य मूर्तिमन्त बनकर नारी के रुप में विद्यमान है। किन्तु प्रकृति की यह अखण्ड सौन्दर्य प्रतिमा आज कुछ खण्डित-सी हो गयी है।

मनुष्य की प्रगल्भ बुद्धि की यह करामात है। पृथक्करण की विशेष क्षमता-युक्त उसकी बुद्धि पृथक् करने में ही कमाल दिखाती रही है और अन्त में स्वयं मनुष्य जाति को भी तोड़कर पुरुष और स्त्री का भेद भी उसने खड़ा कर दिया। उस भेद का दुष्परिणाम प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर है कि स्त्री दीन-हीन और पददलित हो गयी तथा पुरुष सर्वश्रेष्ठ हो गया। सृष्टि का छोटा-सा भाग यह मनुष्य समाज ही ऐसा है जिसमें गुणों के आधार पर नहीं अपितु कल्पनिक भेदों के आधार पर व्यवस्था बनी हो। गुणों के आधार पर हुआ विभाजन विवाद पैदा नहीं करता। विवाद खड़ा करती है काल्पनिक भेद रेखाँ।

मनुष्य की इस भेदबुद्धि ने सदा विवाद, विसंवाद और विसंगतियाँ उत्पन्न करके प्रकृति को विकृत किया है। संवाद की स्थापना ही आशीर्वाद बरसाती है। भेदों के विवाद को मिटाकर समानता और एकरूपता का संगीत ही जीवन में अमृतरस घोल सकता है।

मानव सभ्यता के विकास में स्त्री और पुरूष दोनों का महत्वपूर्ण और समान रूप से योगदान रहा है। वास्तविकता तो यह है कि कहीं-कहीं पुरुषजाति की अपेक्षा मातृजाति का योगदान अधिक है।

मानव समाज में नर-नारी की भूमिका को स्पष्ट करने के लिए मैं अणु का उदाहरण देना चाहुंगी। अणु मे एक मध्यवर्ती केन्द्रिय सत्ता होती है। जिसे नाभिक कहते हैं। इसके इर्द-गिर्द इसकी सहायक ईकाइयाँ जुड़ी रहती है। किन्तु शक्ति का स्त्रोत नाभिक में ही होता है। अणु परिवार के भीतर पायी जानेवाली प्रचण्ड सत्ता और अद्भूत क्षमता का केन्द्र नाभिक ही है।

मनुष्य को हम एक अणु कह सकते हैं। नर उसका कलेवर है और नारी उसका

नाभिक है। उत्पादन की समग्र क्षमता इसी में है। उत्पादन, परिपोषण, संरक्षण, संवर्धन सब इसी माध्यम से होता है। यौ तो पूर्ण मनुष्य नर-नारी दो घटकों के मिलने से ही बनता है परन्तु यदि दोनों का पृथक् विश्लेषण किया जाय तो वरिष्ठता सहज ही नारी के हिस्से में चली आती है। नारी शक्ति का मूलकेन्द्र है। नारी मानव शक्ति का नाभिक है। उसी के इर्द-गिर्द समूची मानव जाति अणु समूह की तरह संश्लिष्ट है।

नर और नारी सृष्टिचक्र के दो पहिये हैं। नारी धरती है, नर उस पर उत्पन्न होते पौधें हैं। नर बढ़ता है किन्तु उसकी जड़े सींचने में उसका पोषण करने में नारी का सरस समर्पण है। नारी की महिमा धरती के तुल्य है। वस्तुत: इस मां धरती का धैर्य उसकी सृजनशीलता और संयम है।

अगर मातृजाति के दिव्यगुणों का लाभ समीचीनता से उठाया जाता तो मानवीय सभ्यता अधिक समृद्ध होती। पर हुआ इसके विपरीत। उसे योग्य और स्वतंत्रता के साथ विकसित होने के अवसर नहीं दिये गये। दमन और विवशता की जिन्दगी जीने के लिए उसे बाध्य किया गया। इस बात का अतीत ही नहीं वर्तमान भी साक्षी है। आज भी हजारों महिलाएँ पराधीनता का जीवन जी रही हैं। यह दयनीय चित्र समाज के प्रबुद्ध चिन्तकों के लिए विचारणीय है। हजारों वर्षों से प्रबुद्ध समाज शक्तियों एवं आप्त पुरुषों के द्वारा निरन्तर इस दिशा में प्रयत्न होते रहे हैं परन्तु इसमें सफलता क्यों नहीं मिली यह प्रश्न अनुत्तरित है। सामाजिक व्यवस्था बनाने में धार्मिक पुरुषों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। किन्तु इसमें आये दोषों और विकृतियों के लिए केवल वे ही उत्तरदायी नहीं है जब व्यवस्था समय परिवर्तन के कारण दोषपूर्ण हो जाती है और जब उसे दूर करने का साहस लोगों में समाप्त हो जाता है तब सामाजिक विकृतियाँ पैदा होती हैं और समाज रूग्ण हो जाता है। त्याग और बलिदान में, सेवा और सहनशीलता में जहा पुरुष चूक जाता है वहाँ नारी कर्तव्य परायणता की मूर्ति बनकर खड़ी हो जाती है। उसकी कुर्बानियों की गाथा इतिहास चाहे अंकित कर पाया या नहीं लेकिन पुरुष का अर्न्तहृदय इसका साक्षी है। झांसी की रानी जैसी एक नहीं अनेक वीरांगनाओं ने वीरता की दृष्टि से पुरुषों को भी परास्त किया है। तत्त्वज्ञान की सूक्ष्मता को ग्रहण करने की क्षमता और साथ ही उसकी अभिव्यक्ति द्वारा याज्ञवल्क्य जैसे ज्ञानी महर्षि को चकित करनेवाली गार्गी क्या अकेली ही रही होगी? अनेकानेक सन्नारियाँ पथभ्रष्ट पुरुष जाति को अपनी विवेक शक्ति से सत्पथ पर लाती है।

मानवता के इतिहास में एक ऐसा भी समय रहा है जब प्रगति के समस्त मार्ग पुरुषों के लिए ही खुले थे, उन्हीं के हाथों मे सत्ता केन्द्रित रही, सम्पत्ति केन्द्रित रही, सुख केन्द्रित रहा। और तो और धर्म भी पुरुषों तक ही सिमट गया था। स्त्री का अपना कोई सुख-दु:ख नहीं था। उसका अपना अस्तित्व भी नहीं था। जीवन के आरम्भ से लेकर अन्त तक पुरुष के संरक्षण में रहना यही था स्त्री का भाग्य। मातृजाति में शक्ति है कि वह आध्यात्मिक ऊँचाइयों को प्राप्त कर सकती है। सामाजिक दृष्टि से भी वह शिखरों को छू सकती है तथा राजनीतिक क्षेत्र हो या वैज्ञानिक किसी भी क्षेत्र में पुरुषों से कम नहीं है। क्या कभी ऐसा भी युग आयेगा जब सम्पूर्ण मनुष्य जाति बिना किसी वर्ग या वर्णभेद के समान रूप से जीने का अवसर प्राप्त कर सकेगी? यदि ऐसा कभी पृथ्वी पर संभव हो सका तो वह समय मनुष्य जाति के विकास का स्वर्णिम युग होगा। यद्यपि पुरूष और स्त्री के गुणों में भिन्नता है, उनकी क्षमता अलग-अलग है तथापि उनको समान रूप से सम्मान प्राप्त होना चाहिए। ऐसा होने पर ही स्वस्थ समाज की रचना संभव हो सकेगी। मां सृष्टा है, निर्माता है, वह संहारक नहीं हो सकती। अनुशासन में इस जाती का अगर पूरा लाभ उठाया जा सके तो आज आणविक शस्त्रस्त्रों की होड़ समाप्त हो सकती है। इस सृष्टि को क्रूरता की नहीं, करुणा की आवश्यकता है। करुणा की सहज प्रतिमूर्ति है मातृजाति।

आनेवाली नयी शताब्दी यदि मातृजाति के सम्मान में एक नया अध्याय जोड़ सके तो निश्चय ही एक स्वस्थ और शक्तिशाली समाज की रचना होगी। आनेवाली शताब्दी नारी के पुनर्जागरण और मातृशक्ति के द्वारा मानवता के कल्याण की शताब्दी होगी।

- **नाणेण जाणइ भावे** - **ज्ञान से मुनष्य जानता है।**
- **दंसणेण य सद्दहे** - **दर्शन से श्रद्धा उत्पन्न होती है।**
- **चरित्तेण निगिण्हाइ** - **चारित्र से निरोध, नियन्त्रण होता है।**
- **तवेण परिसुज्झइ** - **और तप से मनुष्य विशुद्ध होता है।**

मित्र मानव !
आओ, थोड़ी सी बात कर ले !

जब हम प्रसाधनों का उपयोग करते हैं,
जब हम चाँदी का वर्क उपयोग में लेते हैं,
जब हम दवाओं का उपयोग करते हैं,
जब हम आइस्क्रीम, चॉकलेट आदि खाते हैं
तब पशु संसार पूछता है–

-पद्मश्री डॉ. आचार्य चंदनाश्रीजी

मित्र मानव! मेरे मन के कुछ प्रश्न है; जबाव दोगे?

मैंने तुम्हारी सेवा की है। मैंने तुम्हें दूध पिलाया है, तुम्हारे लिए गीत गाये हैं। तुम्हारे खेत में हल जोता है, तुम्हारा भार ढोया है, तुम्हारी यात्राएँ सुगम की हैं। तुम्हारे हित, सुख एवं स्वास्थ के लिए मुझपर अनेक वैज्ञानिक प्रयोग हुए हैं। अन्तरिक्ष में भी पहले मुझे भेजा गया है। सहस्त्राब्दियों से मैंने तुम्हारी सेवा की है और भविष्य में भी करता रहूंगा।

देखो! मेरी आंखों में झांककर! देखो मेरे निरागस सौन्दर्य को। तुम्हें ऐसी कौन-सी बात लगी जो तुम अपना पेट भरने के लिए कुछ थोड़े से घण्टों की भूख मिटाने, थोड़ी देर के सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए मुझे निर्दयता से, निष्ठुरता से और क्रूरता से काटकर मेरे दीर्घ जीवन को समाप्त करते हो? मेरे आनन्दपूर्ण जीवन को क्लेश देकर नष्ट करते हो?

देखो! तुम्हारे रक्त से सने हाथ! कुछ सोचो। क्योंकि तुम बड़े बुद्धिमान हो।

–तुम्हारा सहयोगी पशु

बीज बोते चलो

-आचार्य चन्दना

अनायास और सहसा
जीवन की यात्रा में
मिल जाते हैं साथी, सहयोगी और मित्र।
कैसे अकस्मात घट जाता है?
जगत जाल का एक भाग? नहीं।
तीर्थंकर महावीर ने कहा है
यह सब पूर्वकृत है।
चले थे तुम।
बोया था किसी जन्म में तुमने ही
कल्पवृक्ष का बीज।
पनप गया है,
फूलों और फलों से लद गया है।
यात्रा में उसकी ही सुखद छाया है।
जिसे तुम अनायास कहते हो,
यह तुम्हारा है पूरा प्रयास,
जिसे है तुमने ही बोया।
इसी तरह–
खेती करते चलो, बीज बोते चलो।
पता नहीं, कब किस मार्ग से गुजरना होगा।
तब तुम्हारे ये बोये बीज वृक्ष होंगे।
जिनकी छाया में
जन्म जन्मान्तरों की यात्राएँ भी
सुखद होंगी, सफल होंगी।

जिंदगी शानदार है, जी भरकर जिएं

कहते हैं मनुष्य जन्म बड़ी मुश्किल से मिलता है। इसे अच्छा जिओ और जी भरकर जिओ। लेकिन जीवन कभी एक-सा नहीं रहता। कभी दु:ख तो कभी सुख, धूप-छांव की तरह आते रहते हैं। ढेरों चुनौतियां आती हैं। लेकिन जिन्हें जीवन जीने का सलीका आ जाता है, उनके लिए चुनौतियां मायने नहीं रखतीं। जिसे मुस्कराकर हौसलों से आगे बढ़ना आ जाता है, उसकी सभी मुश्किलें आसान हो जाती हैं। जिसे खुद से और सबसे प्रेम करना आ जाता है, उसे जीवन श्रेष्ठ और शानदार लगने लगता है।

जब आप प्रकृति के करीब होते हैं, उसका आनंद लेते हैं, तो सारे जहान की खुशियां आपकी झोली में आ जाती हैं। सुबह होते ही सूर्य अपनी आभा बिखेरने लगता है। फूल खिलने लगते हैं। पक्षियों की चहचहाहट शुरू हो जाती है। दूर कहीं से झरनों की कल-कल सुनाई देती है। मानो मधुर संगीत बज रहा हो। भोर की शुद्ध, निर्मल हवा दिलो-दिमाग पर छाने लगती है। तन-मन ताजगी से भर उठता है। नई ऊर्जा का संचार होता है। मन करता है, हम भी अपने कर्म-पथ पर निकल पड़ें। यह सब सुहानी प्रकृति की देन है। जितना हम उसके करीब जाएंगे, जीवन को उतना ही शांत और सुंदर जी सकेंगे। यही स्वर्ग है। प्रकृति ने हमें बहुत कुछ दिया है। इसका हमें आभार मानना चाहिए।

प्रकृति का साथ पाने के लिए हम सुबह टहलने जा सकते हैं। योगा कर सकते हैं। मध्यम-मध्यम स्वर में सुरीला संगीत सुन सकते हैं। प्रभु का स्मरण कर सकते हैं। गुरुजन के दर्शन कर सकते हैं। चार दोस्तों के साथ घूमने जा सकते हैं। पशु-पक्षियों से दोस्ती कर सकते हैं। वे हमसे निर्भय और हम उनसे निर्भय। यही तो जीवन की सार्थकता है। सारा विश्व आपको दोस्त नजर आएगा। एक-दूसरे के लिए अहिंसा और सद्भाव रखने से ही जीवन चलता है। आप भी खुश और दूसरे भी खुश। जब आपका दिल और दिमाग शांत और सुकून से भरा होगा, तो आप मदद कर सकते हैं। दूसरों की भी और खुद की भी। अच्छे विचार आएंगे। आप जीवन का आनंद ले सकेंगे। ऐसा लगेगा जैसे पूरा विश्व आप में समाया हुआ है। तब देने का भाव भी जगेगा। यह भाव आसानी से नहीं आता। संतोष से आता है।

मन अच्छा रहेगा तो सभी रिश्ते मधुर लगने लगेंगे। सामने वाला भी आपके करीब आना चाहेगा। क्योंकि सबको शांत और सुकून भरी जिंदगी चाहिए। जब आपका मन अच्छा रहेगा, तो आप खुद से प्रेम करने लगेंगे। जगत के सभी प्राणियों से प्रेम करने लगेंगे। आपकी सोच सात्विक होने लगेगी। आपको कण-कण में प्रेम नजर आने लगेगा। प्रेम प्रभु का रूप है। मुझ में प्रेम, तुझ में प्रेम। मुझ में प्रभु, तुझ में प्रभु। जब यह भावना दृढ़ होने लगती है तो वह परम आनंद की अनुभूति होती है। जिंदगी जंग नहीं कि लड़ते रहें बात-बात पर। इसलिए कभी मौन रह कर लड़ाई को टालें, तो कभी हंसकर। और आनंद लें उस दुर्लभ और शानदार जीवन का, जो हमें बहुत मुश्किलों से मिला है। अपने अच्छे और पुण्य कर्मों से मिला है।

–जयदीप ढढ्ढा

बहुत छोटी है हमारी सहयात्रा

एक बहन बस में सवार हुई। एक यात्री के बगल में सीट खाली देखकर वहाँ बैठ गई। बैठते समय उसके कई सारे बेग्स थे जिनसे बगल में बैठे पुरुष यात्री को धक्के भी लगे और चोट भी आयी। लेकिन यात्री स्वयं को संभालता हुआ चुप बैठा रहा। उसकी चुप्पी और शान्ति से उस बहन को आश्चर्य हुआ। उसने पूछ ही लिया, "आपको मेरे सामान से इतने धक्के लगे, चोट भी आयी लेकिन आप कुछ बोले नहीं, न कोई शिकायत की?"

यात्री ने मुस्कुराकर जो कहा, सचमुच स्वर्णाक्षरों में अंकित करने लायक है। उसने कहा, हमारी सहयात्रा अत्यन्त अल्पकालिक है। अगले ही पड़ाव पर उतर जाऊंगा। तो क्यों छोटी-सी बात के लिए शिकायत करुं या नाराज होऊ?

उस बहन को इस उत्तर की उम्मीद नहीं थी। उसने अपनी गलती के लिए क्षमा मांगी और सोचती रही उसके इस वाक्य पर कि "हमारी यात्रा बहुत छोटी है।"

बड़ा प्रेरणादायक है वाक्य। जब भी हमारा मन उलझ जाय निरर्थक वाद-विवाद में, ईर्ष्या और दुराग्रह में तो सोचे- "हमारी सहयात्रा बहुत छोटी है।"

जब किसी ने अकारण अपमान कर दिया हो तो सोचे- "हमारी सहयात्रा बहुत छोटी है।" किसी ने प्रतिकूल आचरण कर दिया आपके प्रति तो सोचे- "हमारी सहयात्रा बहुत छोटी है।"

जिस किसी से तकलीफ हो जाय और उलझने का प्रसंग आ पड़े तो सोच लेना- हमारी सहयात्रा बहुत छोटी है।

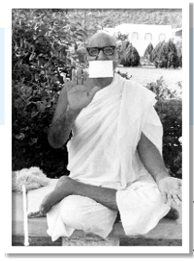

ज्ञानदान है सच्ची विरासत

पूज्य गुरुदेव उपाध्याय श्री अमरमुनिजी महाराज ने जीवनभर जनकल्याण हेतु साहित्य सृजन किया। उनके तप और ज्ञान का निचोड़ उनके साहित्य में है। यह ज्ञानगंगा जन-जन तक पहुँचे अत: उसका वीरायतन द्वारा पुन: प्रकाशन हुआ है। अनेकों ने इसे पढ़कर जीवन धन्य बनाया है। हर घर में इसकी स्थापना होनी चाहिए क्योंकि यह परिवार के लिए बहुमूल्य धरोहर है।

आप विद्यालयों, पुस्तकालयों में इसे स्थापित कराकर ज्ञानदान का लाभ ले सकते हैं। आपका यह ज्ञानदान आनेवाली पीढ़ियों तक को सन्मार्ग पर चलायेगा।

गुरुदेव के साहित्य की सूची :–

1. आदर्श कन्या
2. अध्यात्म प्रवचन
3. अहिंसा दर्शन
4. आलोचना पाठ
5. अमर गाथा
6. अमर क्षणिकाएँ
7. अमर वाणी
8. आनंद
9. अपरिग्रह दर्शन
10. अस्तेय दर्शन
11. भगवान महावीर एवं बुद्धों की कथाएँ
12. भक्तामर स्त्रोत की स्तुति
13. भाव धारा
14. ब्रह्मचर्य दर्शन
15. बुद्धि के चमत्कार
16. चिन्तन की मनोभूमि
17. दशवैकालिक सूत्र
18. गागर में सागर
19. गीतांजलि
20. जैनत्व की झाँकी
21. जैन बाल शिक्षा
22. जैन धर्म और अभिनव अध्यात्म
23. जैन इतिहास की कथाएँ
24. जिन पूजा
25. कल्याण मंदिर
26. महामंत्र नवकार
27. मंगल वाणी
28. पच्चीस बोल
29. पर्युषण प्रवचन
30. प्रज्ञा से धर्म की समीक्षा
31. प्रकाश की ओर
32. सागर नौका और नाविक
33. समाज और संस्कृति
34. सामायिक सूत्र
35. सात वारों से क्या सीखें
36. सत्य दर्शन
37. सत्य हरिश्चंद्र
38. सूक्ति त्रिवेणी
39. तीन बात
40. उपासक आनंद
41. समय की परतों में
42. The Distilled Essence of Non-Violence
43. Thus Spoke
44. Bliss
45. Chastity
46. Equanimity
47. Eternal Wisdom

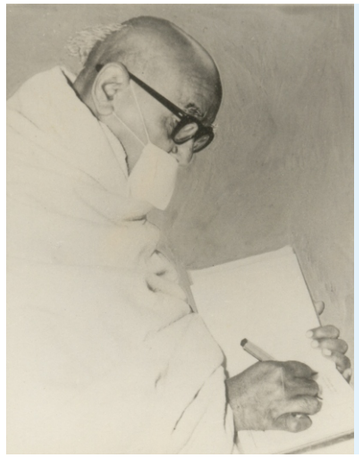

राजगीर वीरायतन के पावन तीर्थ पर
अनेक आकर्षण केन्द्रों में
एक अद्वितीय केंद्र है
पूज्य गुरुदेव का विशाल ज्ञानकोष

वाऽऽऽउं! ओऽऽऽह! वीरायतन गेट के अन्दर आते ही बच्चे उछल पड़ते हैं इन शब्दों के साथ। कितना सुन्दर! कितना शांतिदायक स्थान है! यात्री बोल उठते हैं। जैसे-जैसे उनके कदम आगे बढ़ते हैं, उनके दिल में प्रसन्नता बढ़ती जाती है। चारों ओर की स्वच्छता एवं हरियाली हरेक यात्री के मन को मुग्ध कर देती है।

और जैसे-ही वे 'श्री ब्राह्मी कला मंदिरम्-म्यूज़ियम' में प्रवेश करते हैं अभिभूत हो जाते हैं, अवाक् रह जाते हैं। मानो वे साक्षात् तीर्थंकरों के जीवन का दर्शन कर रहे हो। स्वाभाविक है ऐसी अनुभूति का होना। क्योंकि आज से 40 वर्ष पूर्व जब "पद्मश्री" डॉ. आचार्य चन्दनाश्रीजी ने अपने कलात्मक हाथों से इसे रुपायित किया था, वे स्वयं क्षेत्रातीत, कलातीत भावस्थिति में पहुँच जाते थे। दर्शकों को भी प्राय: उसी भावस्थिति में यह निर्मिति पहुँचा देती है।

और इसी श्रद्धाभक्ति के भावों में आचार्यश्री ताई माँ ने एक सुन्दर कलात्मक "प्राचीन तीर्थ दर्शन" 2022 में निर्मित किया है। जहाँ बिहार के प्राचीन तीर्थों की यात्रा बड़ी प्रसन्नता से यात्री करते हैं।

यहाँ नेत्र ज्योति सेवा मंदिरम्- आई हॉस्पिटल भी है। जहाँ 50 वर्षों से जरुरतमंद नेत्र रोगियों की आंखें रोशन होती है। जहाँ मरीजों को नेत्र ज्योति के साथ मन की भी ज्योति प्राप्त होती है। उनके हृदय में करुणा और सेवा के भाव जागृत किये जाते हैं।

ग्रन्थागार–

और यहाँ एक स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जो जिज्ञासुओं, शोधार्थी विद्वानों तथा विद्यार्थियों को आकर्षित करता है। यहाँ पूज्य गुरुदेव उपाध्याय श्री अमरमुनिजी महाराज का विपुल ज्ञानकोष (पुस्तकालय) है। करीब बीस हजार पुस्तकें हैं। जिसमें आगम, शास्त्र, टीकाग्रन्थ तथा हर धर्म, हर भाषा के लेखकों साहित्यकारों, विद्वानों के ग्रन्थ, नाटक, उपन्यास, कथा आदि है और है अतिदुर्लभ अन्यत्र अनुपलब्ध प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रह। यह ग्रन्थागार रत्नों का खजाना है। आमन्त्रित है आप। आए! और जितना लाभ उठा सके उठाये।

जनसेवा हेतु पद्मश्री-2022 से सम्मानित परम श्रद्धेय पूज्य आचार्यश्री डॉ. चन्दनाश्रीजी

दिसम्बर - 2022 तक का विवरण

- **नेत्र ज्योति सेवा मन्दिरम्**
  आई हॉस्पिटल - वीरायतन, राजगीर (बिहार)
  - आई चिकित्सा - 30,65,586
  - आई ऑपरेशन - 3,61,808
  - दन्त चिकित्सा - 2,30,341
- **श्री ब्राह्मी कला मन्दिरम्**
  म्यूजियम - वीरायतन, राजगीर (बिहार)
  - दर्शनार्थी - 66,64,347
- **वीरायतन अतिथि गृह एवं भोजनालय**
  वीरायतन, राजगीर (बिहार)
  - आनेवाले अतिथि - 10,969
  - कमरा बुकिंग - 3,628
  - भोजनालय - 6,659

अद्भुत छे सेवाभाव

आदिनाथ नेत्रालय अने तीर्थंकर महावीर विद्यामंदिर अत्यन्त स्तुत्य प्रयास छे। आदिनाथ नेत्रालय मां अमारी आ बीजी मुलाकाल छे। अमारा मुनि महाराज नी आंखोनु सफल ऑपरेशन खुब सातापूर्वक थयु छे। जे साधु-साध्वी माटे व्यवस्था अहिया करवामां आवी छे ते खूबज साताकारी छे। डॉक्टरों अने स्टाफ नु विवेकपूर्ण व्यवहार पण अति उत्तम छे।

आचार्य चन्दनाश्रीजी ने हृदय थी खूब-खूब धन्यवाद छे। जन-जन सुधी प्रभु महावीर अने महावीर नी अहिंसा पहुँचाडवानो अेमनो प्रयास अभिनन्दनीय छे। आ संस्थानु परिचय पामी ने अने अहिया ना सेवाभाव ने अनुभवी ने खूब आनन्द थयो।

पद्मश्री डॉ. आचार्य चन्दनाश्रीजी श्रद्धेय ताई माँ की दृष्टि और आशीर्वाद से आदिनाथ नेत्रालय पालीताणा में नि:स्वार्थ करुणामय कार्य प्रगतिशील है। रोगियों को नाम मात्र या बिना किसी लागत के अच्छी गुणवत्ता वाले नेत्रोपचार प्राप्त हो रहे हैं। गुजरात के पालीताणा जैसे छोटे शहर में यह अस्पताल अपने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अत्याधुनिक उपकरणों के साथ सभी प्रकार के जटिल नेत्र रोगों के लिए उपलब्ध है।

2021 से यहाँ रेटिना के विशेष उपचार भी उपलब्ध हो गये हैं। श्री आदिनाथ नेत्रालय पालीताणा ने आसपास के ग्रामीण दुर्गम क्षेत्रों में आउट रीच कैम्प शुरू किये हैं। जनवरी के प्रथम सप्ताह में नजदीक के गांव में कैम्प करके 215 पेसेन्ट्स की जाँच एवं चिकित्सा की और 13 मरीजों की नि:शुल्क सर्जरी आदिनाथ नेत्रालय पालीताणा वीरायतन में की।

–निरागचन्द्र सागर

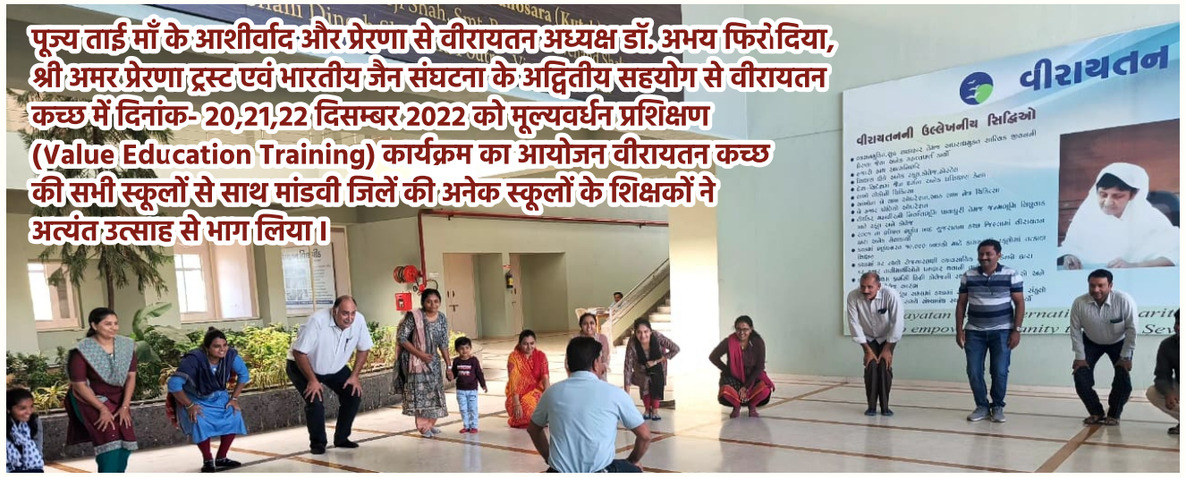

पूज्य ताई माँ के आशीर्वाद और प्रेरणा से वीरायतन अध्यक्ष डॉ. अभय फिरोदिया, श्री अमर प्रेरणा ट्रस्ट एवं भारतीय जैन संघटना के अद्वितीय सहयोग से वीरायतन कच्छ में दिनांक- 20,21,22 दिसम्बर 2022 को मूल्यवर्धन प्रशिक्षण (Value Education Training) कार्यक्रम का आयोजन वीरायतन कच्छ की सभी स्कूलों से साथ मांडवी जिलें की अनेक स्कूलों के शिक्षकों ने अत्यंत उत्साह से भाग लिया।

वीरायतन कच्छ में मूल्यवर्धन शिक्षण के सफल आयोजन के बाद पूज्य ताई माँ ने कहा कि नई पीढ़ी को संस्कारित करने के लिए कच्छ के प्रत्येक स्कूल तक मूल्यवर्धन कार्यक्रम पहुंचे। आदरणीय श्री अभय फिरोदिया के सहयोग से वीरायतन सतत इस ओर प्रयत्नशील रहेगा।

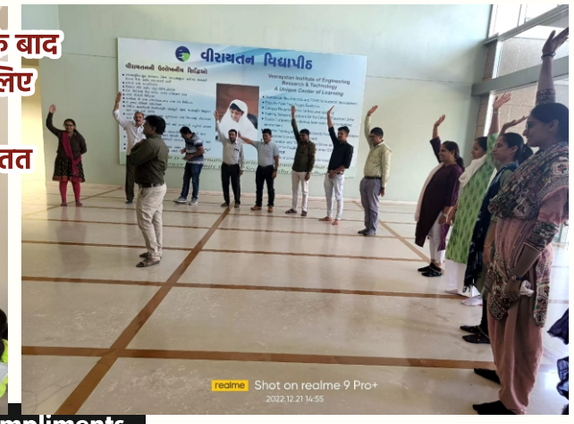

With Best Compliments

soapytwist
Be Naturally Creative
The Soap Crafters
5245, Chowk Bara Tuti, Sadar Bazar, Delhi-110006
Email : info@soapytwist.com Website : www.soapytwist.com

T.T. Garments
अच्छे लगे अच्छे दिखे
T.T. LTD. : E-mail: export@tttextiles.com
Web. : www.tttextiles.com

C. R. Kothari & Sons Group of Companies
Members : NSE BSE MCX MCXSX - DP-CDSIL
Core Presence in : Capital Markets, Depository Participants, Advisory Services Commodities, Green Energy, Logisstics
Offices : Mumbai Vadodara Jaipur Ajmer

Guru Bhakt
Chennai